"लेकिन—!" नज़मा की आवाज़ ही न निकल सकी ।

"मैंने उस रात···" जमाल ने कुछ कहना चाहा किन्तु अधिक भावुकता के कारण उसके गले से आवाज़ न निकल सकी ।

नज़मा उसकी कोई भी बात न सुन सकी थी । उसके मनो-मस्तिष्क में इस समय केवल 'विनसेंट वान गॉग' छाया हुआ था । नज़मा को चुप देखकर जमाल ने फिर कहा, "अगर आप विश्वास करें तो एक बात कहूँ ।"

"हूँ—"नज़मा अनायास उसकी ओर मुड़ी ।

"मैंने आप लोगों के सामने रेल में जो रूप धारण किया था उसमें एक भेद छुपा हुआ था । मैं दुनिया में एक जोकर बनकर रहना चाहता हूँ जो ज़माने को ठहाके देता है और आप आँसुओं का मास्क पहनता है," जमाल ने कहा ।

"लेकिन क्यों ?" नज़मा ने [illegible] आश्चर्य से पूछा ।

"मैं दुनिया को बहुत निकट से देखना चाहता हूँ—अपनी कला को जीवन देना चाहता हूँ चाहे इसके लिए मुझे तन-मन-धन बल्कि अपने प्राणों तक की भी आहुति देनी पड़े—अगर ध्यान से देखा जाए तो मैं किसी को धोखा भी नहीं देता बल्कि अपने आँसू छुपाकर दुनिया को हँसी देता हूँ—ठहाके देता हूँ और इन ठहाकों को मैं कैनवस के कोरे आँचल पर बिखेर देता हूँ ।" जमाल ने ईज़ल पर लगे कैनवस की ओर संकेत करते हुए कहा ।

"इतनी लगन !—इतनी साधना !" नज़मा ने आश्चर्य से कहा ।

"मैं स्वयं तो भूखे पेट रह सकता हूँ लेकिन अपनी कला को प्यासी नहीं रहने देना चाहता । इन्सान का जीवन तो समाप्त हो जाता है लेकिन कला का जीवन कभी नहीं मरता—कला सदा अमर रहती है—अब तो मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि दुनिया मुझे नहीं समझना चाहती—शायद मेरा अन्त भी वान गॉग के समान ही हो—" जमाल ने मन की बात कह दी ।

"वान गॉग !" नज़मा चौंक पड़ी ।

"शायद आपको आर्ट से लगाव नहीं वरना आपके लिए चौंक उठने की कोई बात न थी।"

"हूँ—।" नम्रता ने दिल पर काबू पा लिया और फिर धीरे-से बोली, "क्या वान गोफ कोई आर्टिस्ट हुआ है ?"

"आर्टिस्ट···! एक बहुत बड़ा आर्टिस्ट।"

"क्या उसने अपने आपको जिन्दा रखने के लिए···" नम्रता ने कुछ कहना चाहा।

"अपने आपको जिन्दा रखने की बात मैंने नहीं कही···" जमाल ने बीच ही में कहा, "और शायद न ही मैं अपने को जिन्दा रखना चाहता हूँ।"

"तो क्या इसके लिए आत्मा की आवाज को कुचल देना—।" इस बार नम्रता ने जान-बूझकर वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

"आर्ट को जिन्दा रखने के लिए आत्मा तो क्या मैं भगवान् को भी धोखा दे सकता हूँ।" भगवान् को भी बेच सकता हूँ—"

"इतना बड़ा संकल्प !"

"हाँ—केवल इसलिए कि आर्ट सदा जिन्दा रहता है—आज वान-गोफ का आर्ट जिन्दा है—उसका नाम जिन्दा है—उसने जीवन में क्या किया ?—उसने जीवन में क्या खोया ?—क्या पाया···यह मैं जानता हूँ लेकिन दुनिया को जो आर्ट उसने दिया वह आज भी है और सदा रहेगा।" जमाल ने एक दृढ़ता के साथ कहा।

तभी ब्रिज ने नम्रता को पुकारा—वह और वाली गोल्फ खेलकर वापस आ गये थे। इधर-उधर नम्रता को ढूंढने के बाद उन्होंने नम्रता को ढलान के नीचे खड़े किसी आर्टिस्ट से बातचीत करते देखकर आवाज़ दी थी—

"भाई—!" नम्रता ने दूर से ही अपने भैया को देखकर वहीं से उत्तर दिया।

"जमाल साहब ! आपका असली नाम क्या है ? यह मैं केवल इस नाते से पूछ रही हूँ कि आर्ट से मुझे भी बहुत लगाव है।"

"क्या—?"

"हाँ—मैं दिल्ली में स्कूल आफ़ आर्टस् में पढ़ रही हूँ—यहाँ आपको चित्रकारी करते देखकर अनायास खिंची चली आ गई।"

"हूँ—।" आपने मुझे अच्छा मूर्ख बनाया।

"मूर्ख—!" नम्रता ने आश्चर्य से पूछा, "मूर्ख तो आपने हम सब को बनाया था।"

"अब आप भी मुझसे पूछ रही थीं कि वान गोफ़ भी कोई आर्टिस्ट था ोर मैं—खैर अच्छा दिलचस्प मजाक रहा।"

"इन बातों को छोड़िये—मेरे भैया बुला रहे हैं—आप अपना ना: बताईए। मैं आपसे दोबारा मिलना चाहती हूँ—इकट्ठे बैठकर आ पर विचारों का आदान-प्रदान कर सकेंगे।"

"मुझे विष्णु कहते हैं।"

"मुझे नम्रता—हम लोग सीसल होटल में ठहरे हैं—आज शाम को हमारे साथ चाय पीजिएगा।"

"प्रयत्न करूँगा···पर मुझे—।"

"प्रयत्न नहीं वचन—।"

"बहुत अच्छा—हमारी यह भेंट बड़े आर्टिस्टिक ढंग में हुई है।"

नम्रता मुड़ते हुए बोली, "आर्टिस्टिक तो नहीं—हिन्दोस्तानी फि मों के समान ज़रूर हुई है।"

फिर दोनों मुस्करा उठे। नम्रता ढलान चढ़ने लगी—कोई बीस फ़ु ऊपर जाने के बाद नम्रता ने पीछे मुड़कर देखा और विष्णु को अ ी ओर टकटकी लगाकर देखते हुए देखकर बोली, "आज शाम के ठी छः बजे—सीसल होटल में—कमरा नम्बर पन्द्रह।"

"ओ के—" विष्णु ने हाथ हिलाया और फिर उस समय तक न ता को देखता रहा जब तक कि वह ढलान न चढ़ गई और आँखों से ोझल न हो गई।



शाम की चाय की मेज़ पर विष्णु भी पहुँच गया—बाली और

रिज ने उसे हाथों-हाथ लिया और यह जानकर कि विष्णु एक महान् चित्रकार है उन्हें बहुत खुशी हुई।

चाय के बाद विष्णु और नम्रता रिज पर चले आये क्योंकि नम्रता विष्णु के अतीत के बारे मे जानना चाहती थी—विष्णु एक विचित्र करैक्टर था नम्रता की दृष्टि में—

नम्रता के दिमाग में बार-बार यह प्रश्न उठ रहे थे—

विष्णु कौन है ?"

उसका अतीत क्या है ?

क्या जमाने ने उसे जीने का अधिकार नहीं दिया ?

क्या यह अधिकार उसे अब छीनना पड़ रहा है ?"

उसकी कला उन्नति में क्या बाध्य है ? ? नम्रता उसके बारे मे सोचे जा रही थी। उसे मौन और विचार मग्न देखकर विष्णु ने पूछा, "आप क्या सोच रही हैं ?"

"आपके बारे में।"

"मेरे बारे में—क्या मैं इस योग्य हूँ कि आप मेरे सम्बन्ध में सोचें—मैं पूछ सकता हूँ आप मेरे सम्बन्ध मे क्या सोच रही हैं ?"

"क्या आप मुझे अपने अतीत के सम्बन्ध में कुछ बताएँगे ?"

"अतीत…!" विष्णु ने एक निःश्वास खींची जैसे इस प्रश्न से उसे कष्ट पहुँचा हो—किन्तु नम्रता ने उसे हीनता के भाव से नहीं देखा बल्कि उसकी आँखों में उसके प्रति आदर झलकता था—इसलिए धीरे-से वह बोला, "मेरा अतीत जानकर क्या करोगी ?"

"क्यों ?" नम्रता ने अचम्भे से उसकी ओर देखा।

"इसलिए कि यह जो थोड़े समय का साथ मिला है यह भी कहीं…" विष्णु कहते-कहते रुक गया।

नम्रता ने आश्चर्य से उसकी आँखों में झाँका—उन आँखों में सिवाए निराशा के और कुछ नहीं था। नम्रता ने पहली बार उसका नाम लेकर सम्बोधन किया, "विष्णु—!"

"नम्रता ! तुम कलाकार हो—मुझे समझने का प्रयत्न करो—

जिसे पग-पग पर धोखा…छल—वंचकता और निराशा मिली हो वह किस प्रकार जिन्दा रहता है…और किसलिए जिन्दा रहता है… यह तुम भी जान सकती हो…यह केवल चित्रकला की लगन है जो मुझे आजतक जिन्दा रखे हुए है वरना—।" विष्णु भावुकता के प्रवाह में 'आप' से 'तुम' पर आ गया था जिसे नम्रता ने अनुभव कर लिया लिया था। अपने मन में वह यह समझने का प्रयत्न कर रही थी कि विष्णु में ऐसा कौनसा आकर्षण है जो वह उसकी ओर बढ़ रही है—इसे वह लिफ्ट दे रही है ? आखिर क्यों ?—अगर एक कलाकार के नाते वह उसे सहारा देना चाहती है तो वह राकेश को आजतक क्यों ठुकराती आई है—आखिर वह भी तो आर्टिस्ट है—

'मन ने उसे समझाया'—

विष्णु और राकेश में बहुत अन्तर है। विष्णु को आज तक निराशा ही मिली है…उसे दुनिया ने कष्ट दिया है—ठोकरें दी हैं असफलता दी है लेकिन फिर भी वह जिन्दा है—क्यों ? इसलिए कि उसमें चित्रकला को उत्कर्ष पर ले जाने की इच्छा है—उसके मन में सच्ची लगन है। दूसरी ओर राकेश है जो शायद पहली ही बाधा पर …ला से मुँह मोड़ ले—यही अन्तर है दोनों में—जाने नम्रता कितनी देर तक सोचों के धारे में बहती रहती कि विष्णु ने उसके विचारों को झंझोड़ दिया।

विष्णु ने कहा, "नम्रता ! तुम क्या सोचने लगीं ?"

"कुछ नहीं—।" नम्रता दिल के हाथों मजबूर हो गई थी इसलिए वह बोली, "विष्णु ! जब हम एक-दूसरे का दुःख बाँटने ही लगे हैं तो एक-दूसरे के बारे में जान लेना बहुत जरूरी बन जाता है—तुम्हें मुझपर विश्वास नहीं तो एक कलाकार पर तो विश्वास होना चाहिए।"

"विश्वास ! नम्रता, यह कहकर तुम मेरा दिल दुखा रही हो—तुमसे मिलकर मुझे ऐसे अनुभव होने लगा है कि तुम मेरी सच्ची हमदर्द और मित्र हो—और तुम विश्वास की बात करती हो।" विष्णु

''अपनी

ही आवाज़ में अपनापन था।

नम्रता बोली, "अब क्या विचार है?"

"विचार—।" क्षण-भर के लिए विष्णु ने मन में सोचा कि क्या वह नम्रता को अपने अतीत के बारे में बताए या—इस बात के बारे वह कुछ न सोच सका इसलिए वह बोल उठा, "चलो बैंच पर बैठकर मैं तुम्हें अपने बारे में कुछ बतला देना चाहता हूँ कि ज़माने की तेज़ आँधी में कैसे मैं अपना दिया जलाये बैठा हूँ?"

"धन्यवाद!" नम्रता ने कृतज्ञता से उसे देखा और उसके साथ रेल के एक किनारे पर बिछे हुए बैंच की ओर बढ़ गई।

इस बैंच पर से नीचे हाकी का मैदान स्पष्ट दिखाई दे रहा था जहाँ विंटर सीज़न में कृत्रिम बर्फ़ जमाकर स्केटिंग की जाती है और विंटर फ़ेस्टिवल मनाया जाता है—इस समय मैदान में शायद कोई मैच हो रहा था। दो ही मिनट बाद रेफ़री ने खेल समाप्त कर दिया क्योंकि चारों ओर अँधेरा फैलना आरम्भ हो गया था—नम्रता ने ठंडी हवा के झोंके अनुभव किये और विष्णु की ओर देखा जो मानो विचारों की कड़ियों को एक शृंखला में ला रहा था। उसके चेहरे पर गम्भीरता छाई हुई थी। नम्रता एक क्षण के लिए काँप कर रह गई।

विष्णु ने अपनी जीवन कथा आरम्भ की, "नम्रता! आज से बीस बरस पहले की बात है जबकि मेरी आयु अभी बारह बरस की और मेरे छोटे भाई की चार बरस की थी तब दुर्भाग्य से हमारे सिर से पिता की छाया उठ गई—और फिर मेरी माँ मेरी छोटी बहन को जन्म देने के बाद पिताजी के स्वर्गवास होने के ठीक तीन मास बाद आप भी उनसे जा मिलीं। दो मासूम बच्चों का बोझ मेरे निर्बल कन्धों पर आ पड़ा। नासमझ और नादान था, जीवन का बोझ ढोना मेरे लिए बहुत कठिन था कि मेरी बुआ ने इस संकट के समय कुछ सहारा दिया। वह मेरे छोटे भाई और बहन को अपने साथ गाँव ले गई। मुझे भी बहुत कहा लेकिन मैं किसी का बोझ नहीं बनना चाहता था···दूसरे मैं स्कूल में पढ़ता था और एक हद तक

जिसे पगर के यहाँ काम करके अपना पेट पालता था—बच्चा था और वह दि बच्चों के साथ कभी-कभी बच्चा बन जाता था जो घर की माल-किन को एक आँख न भाता था। चन्द महीने गुजरे तो इस रिश्तेदार ने मेरे ऊपर हाथ उठाया। मैं चूंकि अनाथ था और जमाने का विष मुझे पीना था सो चुपचाप सह गया। एक दिन अधिक भूख होने के कारण मैं अधिक खाना खा गया तो घर की मालकिन ने ताना दिया "माँ-बाप मर गए लेकिन खाने में कोई कमी नहीं आई।"

"नम्रता! सच कहता हूँ—उस दिन मेरे आत्म सम्मान को ठेस लगी और मेरी आँखों में अनायास आँसू छलक आए—मैं चुपचाप खाना बीच ही में छोड़कर उठ आया—मालिक बहुत दयालु था लेकिन मालकिन जिससे मेरा रिश्ता था वही मेरे लिए दुश्मन बन गई थी। उस रात मैं सो न सका। सारी रात मेरा नन्हा-सा दिमाग चिन्ता में रहा···मैं सोचता रहा कि यह जीवन कैसे गुजरेगा—दिन बीतते गए और मेरा आत्म-सम्मान मिट्टी में मिलता गया। इस प्रकार एक वर्ष बीत गया—मैं चौथी कक्षा में पहुँच गया।

सच कहते हैं जब इन्सान छोटी आयु में अनाथ हो जाए तो दुनिया की सब ऊँच-नीच समझने लग जाता है—यद्यपि इस स आयु लगभग आठ वर्ष की थी और साधारणतया यह दिन खेलने-कूद के होते हैं।

अब जहाँ मालकिन की जबान बढ़ी थी वहाँ हाथ भी उठने और मेरे लिए इस घर से भाग जाने के अतिरिक्त और कोई नहीं रहा था। एक रात को मैं घर से भाग खड़ा हुआ···बिना लक्ष्य के···। बुआ के पास मैं जाना नहीं चाहता था क्योंकि मेरे छ बहन-भाई उनके पास थे और मेरी बुआ के अपने चार बच्चे भी और उनकी अपनी आर्थिक दशा कोई अच्छी नहीं थी। मैंने आपको परिस्थितियों और समय के प्रवाह पर छोड़ दिया।

घर छूटा, शिक्षा छूटी और मैं जीवन से संघर्ष करने लगा। किसी के यहाँ नौकर बनकर काम किया तो कभी चोरी के

घर से बाहर निकाल दिया गया। समय पाते बड़े [illegible]
त से, ठोकरें लगाता, झकोरे देता और कड़े [illegible]।

विष्णु कुछ देर के लिए चुप हो गया—उसकी आँखों में आँसू छलक आए थे और चेहरे पर निराशा उभर आई थी। नम्रता ने अनायास अपना हाथ विष्णु के कन्धे पर रख दिया जैसे वह उसे सांत्वना देना चाहती हो। अब काफ़ी अँधेरा घिर गया था [illegible] और एक विचित्र-सा दृश्य था किन्तु वह दोनों इस समय दुनिया की सुन्दरता से दूर थे—विष्णु ने एक बार नम्रता को देखा और फिर एक ठण्डी आह भर कर कहने लगा।

"फिर एक दिन एक सरदार साहब जो ठेकेदारी करते थे मेरी दास्तान सुनकर मुझे अपने साथ ले गए। उनकी एक छोटी-सी लड़की थी जो चौथी कक्षा में पढ़ती थी। इन सरदार साहब ने मुझे अपने बेटे के समान पाला और आगे शिक्षा दिलवाने के लिए मुझे स्कूल में डाल दिया—मैंने और उनकी लड़की ने एक ही क्लास में शिक्षा पानी शुरू की और मैट्रिक तक पहुँचे—सरदार साहब की लड़की मैट्रिक के बाद कालिज में दाखिल हो गई...मुझे भी कालिज ज्वाइन करने के लिए कहा गया किन्तु मेरा मन चित्रकला की ओर था। मैं किसी आर्ट कालिज में जाना चाहता था। मैंने सरदार साहब के सामने यह इच्छा व्यक्त की तो उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर ली। वास्तविकता यह थी कि सरदार और सरदारनी साहिबा मुझपर बड़े दयालु थे ...लाखों की जायदाद थी और वह मुझे घर-जमाई बनाना चाहते थे। एक दिन मैंने यह खुसर-फुसर सुन ली थी। वास्तव में मुझे भी उनकी लड़की रानो से प्यार हो गया था जिसे हीनता के भाव के कारण मैं व्यक्त न कर सका था। रानो कालिज में दाखिल हुई और मैंने फ़ाइन आर्ट की क्लास में दाखिला ले लिया। समय बीतते देर न लगी—मेरी आर्ट के लिए रुचि और रानो के लिए प्यार की भूख बढ़ती गई लेकिन मुझे क्या मालूम था कि वह रानो जिसको मैं तन-मन से प्यार करता था किसी और के सपने देखने लगी है—मुझसे यह सहन न

हो सका और एक दिन एकान्त में मैंने रानो का हाथ पकड़ लिया और उसे बतलाया कि उसके माता-पिता मेरा और उसका ब्याह करना चाहते हैं—दूसरे, मैं भी उसे मन से चाहता हूँ—बरसों का प्यार और स्नेह चन्द ही मिनटों में घृणा में बदल गया। रानो ने मेरे गाल पर थप्पड़ दे मारा और क्रोध से लाल-पीली होती हुई बोली, "तुम इस घर में एक नौकर बनकर आए थे—अब मालिक बनने के सपने देख रहे हो। मेरे पिताजी ने तुम्हें बेसहारा और अनाथ जानकर आश्रय दिया था और तुम यह उनके उपकार का बदला चुकाना चाहते हो—कान खोलकर सुन लो···आज के बाद अगर तुमने मुझसे ऐसी व्यर्थ बात की तो तुम्हारी शिकायत पिताजी से कर दूँगी—समझे—" और रानो घृणा से जमीन पर थूकती हुई बाहर निकल गई।

उसी रात बिना किसी को बताए मैं वहाँ से भाग खड़ा हुआ। अचानक मेरी भेंट अपनी बुआ के बड़े बेटे से हो गई—और वह मुझे अपने साथ घर ले गया—मेरी बुआ मेरे लिए बहुत चिन्तित रहने लगी थी···वह यह भी चाहती थी कि मैं अपने भाई-बहन को स्वयं संभालूँ। मैंने निश्चय कर लिया कि अपना उत्तरदायित्व निभाऊँगा और छोटे बहन भाई का उचित पालन-पोषण करूँगा।

मैंने शहर में आर्ट का स्टुडियो खोल लिया। कमर्शल आर्ट ने मेरी सहायता की और एक बरस बाद मैं पाँच छै-सौ रुपया मासिक कमाने लगा। इधर घर वाले अब चाहने लगे कि मैं शादी करके अपना घर बसाऊँ, लेकिन मेरे मन में अब केवल एक ही धुन सवार थी कि मैं इतने रुपये कमाऊँ कि रानो देखती रह जाए।

दो बरस मन लगाकर काम किया और धन कमाया—एक दिन दिल ने मजबूर किया कि रानो को देख आऊँ। दुकान की देखभाल छोटे भाई को सौंपकर एक दिन रवाना हो गया। वहाँ रानो से भेंट तो न हो पाई क्योंकि उसकी शादी हो चुकी थी हाँ वापसी पर अपने छोटे भाई की मौत की भयानक सूचना मिली···मेरी एक बाँह टूट

विष्णु दिल्ली में रहता है—क्योंकि…।" विष्णु ने जान-बूझकर वाक्य अधूरा छोड दिया ।

नम्रता कुछ न समझ सकी लेकिन ऐसे लग रहा था जैसे वह किसी उलझन में हो ।

"क्या मतलब ?" आखिर नम्रता ने उलझन दूर करने के लिए पूछा ।

"कमर्शल आर्ट का आर्टिस्ट मिस्टर जमाल है जो अलीगढ़ में रहता है—और [illegible] का पुजारी जो विष्णु है वह दिल्ली में रहता है।" विष्णु ने [illegible] की मुश्किल आसान कर दी ।

"म[illegible] [illegible] व्यक्तित्व है ।" नम्रता बात की गहराई में जा [illegible]

"लो[illegible]

"[illegible]

[illegible] आप उसी को मान देता है [illegible] में मान देना तो कोई [illegible] दिल की बात कह दी [illegible] मुस्कराकर रह गई । [illegible] उससे परिचय करा- [illegible] खड़ी हुई । [illegible] चलने लगा ।

[illegible] फिर दोनों मुस्करा[illegible]

[illegible] चल रही थी । नम्रता सो[illegible] जीवन कितना नीरस और [illegible] जीवन में जैसे बसन्त [illegible] गुनगुना रही है केवल [illegible] यह

भी लायब्रेरी में चली गई और आर्ट की एक पुस्तक लेकर उसके पन्ने पलटने लगी। थोड़ी देर बाद प्रोफेसर श्रीवास्तव वहाँ आ गए और नम्रता को अकेले पढ़ते देखकर बोले, "सुनाओ नम्रता छुट्टियाँ कैसे कटीं ?"

नम्रता पहले तो झेंपना-सी गई लेकिन श्रीवास्तव को सम्बोधित करके बड़े विनय के साथ बोली, "सर ! बहुत अच्छी—हम लोग इस बार शिमला गए थे—और सर ! आपने एक बार मुझे कहा था, कि यह कला प्रकृति की देन होती है।"

"इसमें कोई सन्देह नहीं—यह कालिज तो केवल आपको प्राथमिक बातें सिखलाते हैं।"—श्रीवास्तव दूसरी कुर्सी पर बैठकर एक पुस्तक को अपने सामने रखते हुए बोले—!

"सर ! मैं एक ऐसे व्यक्ति से आपका परिचय कराना चाहती हूँ जिसको ईश्वर ने असली कला का गुण प्रदान किया है—उसके कला कार्य को देखकर ऐसे अनुभव होता है कि वह जो कुछ कहना चाहता है वह तो कह रहा है किन्तु उसके कार्य में कुछ अभाव है जो मन को थोड़ा खटकता तो अवश्य है किन्तु वह मूलागत भूल कहाँ है पर वैसे दिखाई नहीं देता—।"

"हां—कौन है वह—।" श्रीवास्तव ने रुचि लेते हुए कहा।

"श्री विष्णु—मेरी भेंट उनसे शिमला में हुई थी—उसने दो वर्ष तक आर्ट कालिज में स्टडी की थी किन्तु किसी कारण उसे शिक्षा को अधूरा छोड़ देना पड़ा—फिर भी उसकी कला की चाह निरन्तर बनी हुई है—उसके हाथ में कला का गुण ईश्वरीय देन है।" नम्रता ने विष्णु के सम्बन्ध में पूर्ण रूप में प्रोफेसर को बता दिया।

"मेरा परिचय जरूर उससे करवाओ—मुझसे जहाँ तक हो सका उसकी सहायता करूँगा।" श्रीवास्तव नम्रता की ओर देखकर बोले—फिर कुछ चुप रहकर उन्होंने कहा, "मैंने सुना है राकेश और सुधा ने शादी कर ली है।"

"सर ! मैंने भी ऐसे ही सुना है।"

"बहुत अच्छा हुआ।" श्रीवास्तव ने विचार प्रकट किया।

"जी—।"

"दो प्यार करने वालों की जब शादी होती है तो बहुत प्रसन्नता होती है।" शायद श्रीवास्तव का मन बोल उठा था।

"सुधा तो राकेश से प्यार करती थी लेकिन राकेश···" नम्रता ने जान-बूझकर अपनी बात अधूरी रखी।

"राकेश बहुत अच्छा लड़का है—थोड़ा भावुक है—फ़ैसला जल्दी कर डालता है—उसमें गम्भीरता ज़रा भी नहीं—वैसे यह बहुत अच्छा हुआ है।"

"सर! विष्णु को कब लाऊँ?"

"यह भी कोई पूछने की बात है—जब दिल चाहे ले आना—।" और फिर श्रीवास्तव पुस्तक देखने लगे।

नम्रता चुप हो गई। थोड़ी देर बाद वह उठकर कामन-रूम में चली आई। वहाँ पार्टी का प्रोग्राम बन रहा था। एक लड़की नम्रता के पास आकर बोली, "हम लोग एक पार्टी का प्रबन्ध कर रहे हैं।"

"शुभ विचार है—यह पार्टी कब हो रही है?"

"इस इतवार को—कुतुब मीनार पर।"

"मुझे कितना चन्दा देना होगा?"

"पाँच रुपये—अगर गैस्ट लाना हो तो दस रुपये।"

"ठीक है—मैं एक गैस्ट लाऊँगी और रुपये कल दूँगी—इस समय तो मेरे पास नहीं हैं।"

"कोई बात नहीं—लेकिन इस पार्टी में आपको गीत सुनाना पड़ेगा।"

"यह मुझसे न हो सकेगा···" नम्रता ने पीछा छुड़ाना चाहा।

"यह तो समय और अनुरोध की बात है—वहीं देखेंगे···।" उस लड़की ने कहा।

नम्रता ने लिस्ट पर हस्ताक्षर किए और थोड़ी देर इधर-उधर की बातें करने के बाद घर के लिए रवाना हो गई।

जब नम्रता घर पहुँची सभी खाने की मेज पर बैठे थे। नम्रता को देखते ही उसकी मम्मी ने कहा, "जल्दी से हाथ-मुँह धो लो।"

"अभी आई मम्मी—!" नम्रता ने बैग नौकर के सुपुर्द किया और बाथरूम में घुस गई। जब वह मुँह धोकर बाहर निकली तो मेज पर खाना चुन दिया गया था।

अभी वह मेज पर बैठी ही थी कि उसके पिताजी ने बात छेड़ दी, "मेरे विचार में नवम्बर का महीना ठीक रहेगा—उधर उनका तकाजा बहुत बढ़ता जा रहा है···फिर शिमले से लौटने के पहले उनका अपना स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता।"

"क्यों ब्रिज बेटा···!" मम्मी ने इस बार ब्रिज से पूछा।

नम्रता समझ गई कि ब्रिज भैया और बाली भाभी की शादी की बात-चीत चल रही है इसलिए बोल उठी, "मम्मी! भैया से पूछने की क्या बात है?"

"क्यों—?" मम्मी ने नम्रता की ओर देखते हुए कहा।

"भैया को क्यों इन्कार होने लगा?"

"नम्मो—!" ब्रिज ने नम्रता को घूरकर देखा।

नम्रता इस समय पिताजी और मम्मी के बीच बैठी थी इसलिए चहककर बोली, "भैया! क्रोध में आने की तो कोई बात नहीं—शादी तो एक दिन होनी ही है और वह भी बाली भाभी के साथ—फिर वह दिन आज ही क्यों न हो।"

"नम्रता ठीक कहती है।" लक्ष्मणदास ने नम्रता की बात का समर्थन किया और बोले, "मेरे विचार में उनकी तकलीफ को अपनी तकलीफ समझना चाहिए—फिर इस वर्ष तुम दोनों की फाईनल परीक्षा है।"

"मुझसे पूछने की क्या जरूरत है।" ब्रिज ने खुशी से हथियार डाल दिए।

"मैं न कहती थी कि भैया के दिल में लड्डू फूट रहे हैं—!" नम्रता ने ब्रिज को चिढ़ाया।

"ठहर मैं बतलाता हूं —" ब्रिज ने हाथ उठाया।

नम्रता ने सिर झुका लिया और धीरे-से बोली।

"आज शाम को वाली भाभी को यह सूचना पहुंचा दीजिएगा।"

"नम्मो—! अच्छी तरह बदला लूंगा।"

"बदला लेने का समय भी आ पहुंचा है—।" इस बार नम्रता की मम्मी बोल उठी।

"कैसा समय···?" ब्रिज ने आश्चर्य के साथ मम्मी की ओर करो हुए कहा।

हुआ"बेटा! वास्तव में बात यह है कि मेरे एक प्रिय मित्र दीनदयाल उनको शायद तुम जानते हो—आठ वर्ष पहले हवाई दुर्घटना में ी मृत्यु हो गई थी—मैंने और उन्होंने आज से बारह वर्ष पहले औता और उनके बेटे आनन्द को इकट्ठा करने का निश्चय किया ···।"

न नम्रता के पिताजी अभी बात पूरी भी न कर पाए थे कि नम्रता खाना अधूरा छोड़कर एकाएक मेज़ पर से उठ गई।

"बेटी खाना—।" मम्मी ने उसे रोकना चाहा।

"जाने दो—शायद उसके सामने हम लोग भी खुलकर बात न कर सकेंगे।" लक्ष्मणदास जी की यह आवाज नम्रता के कानों तक भी पहुंच गई।

इसके बाद नम्रता के बारे में खाने की मेज़ पर क्या कुछ बात हुई यह नम्रता को ज्ञात नहीं—लेकिन उसके दिल में एक भयंकर तूफ़ान उठ रहा था जिसकी प्रबलता के सामने वह अपने आपको एक तिनका समझ रही थी—

वास्तव में उसे विष्णु से प्रेम था—और वह उससे शादी करना चाहती थी···लेकिन मन की बात भैया या पिताजी से कहने का उसमें साहस न था। वह अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट गई और आंसुओं की बूंदें मोतियों की भांति उसकी आंखों से एक-एक करके टपकने लगीं—जाने वह कब सो गई इसका उसे पता नहीं चला।

जब शाम को चाय नौकर उसके कमरे में लेकर आया तो उसे मालूम हुआ कि शाम हो गई है—आज शाम ही तो उसने विष्णु से मिलने का समय निश्चित कर रखा था। उसने जल्दी से उठकर चाय पी और बाहर जाने के लिए लिए कपड़े बदलने लगी।

नम्रता ने विष्णु को बैठा उसी की प्रतीक्षा करते हुए पाया—इस-लिए मिलते ही बड़े संकोच से उसने कहा, "क्षमा कीजिएगा—देर हो गई।"

"देर—!" विष्णु क्षण-भर के लिए मुस्कराया फिर अपनी घड़ी को देखकर बोला, "तुम तो समय पर आई हो—मैं ही समय से पहले आ गया था।"

"चलिए—वहाँ बोटिंग क्लब तक चलते हैं।"

दोनों बोटिंग क्लब की ओर बढ़ गए। विष्णु ने एक किश्ती किराये पर ली और उसे लहरों पर छोड़कर धीरे-से बोला, "मेरे जीवन की नाव को अगर तुम सहारा न देती तो यह भी इसी नाव की भाँति लहरों की दया पर होती…।"

"विष्णु!" नम्रता मन की बात कहने के लिए बेचैन थी मगर जुबान साथ न दे रही थी—

विष्णु अपनी तरंग में मस्त बोला, "तुम्हारे सहारे ने मुझे नव-जीवन प्रदान किया है—मेरी कला में नव-आशा का संचार किया है—जाने मेरे जीवन का अन्त क्या होता। आज मैं अनुभव करता हूँ कि कला को जिन्दा रखने के लिए इन्सान को सबसे बढ़कर प्यार की जरूरत होती है—।"

नम्रता इस बार कोई उत्तर न दे सकी बल्कि मन से ही संघर्ष करती रही कि उससे दिल की बात क्योंकर कहे कि वह भी उससे प्यार करती है—और…"

"आखिर तुम चुप क्यों हो?" विष्णु चप्पू नाव में रखकर नम्रता के पास आ गया।

"विष्णु! मेरी एक बात का उत्तर दोगे?"

"उत्तर ! नम्रता, तुम अगर प्राण भी माँगो तो इन्कार ।

"प्रश्न तुम्हारे प्राणों का नहीं । मेरे जीवन का है ।"

"पूछो—।" विष्णु ने विस्मय से नम्रता की ओर देखा ।

"मेरे इन्सानी लगाव और सहानुभूति के बारे में तुमने क्या धारणा निश्चित कर ली है ?"

"धारणा…!" विष्णु के होंठों पर मुस्कराहट की नन्हीं-सी किरण उभरी और वह बोला, "अगर सच पूछो तो मैंने जीवन में रानो को असंला समझा था और वास्तव में उसने असंला का पात्र निभाया है—किन्तु तुम मेरे लिए भगवान् हो…जिसने मुझ पर दया, प्यार और सहानुभूति की बरखा की है—और—।"

"और क्या—" नम्रता ने विष्णु का वाक्य पूरा होने से पहले पूछा—

"मैं मन में तुम्हारी पूजा करने लगा हूँ—।"

"हूँ—।" नम्रता ने एक दीर्घ साँस ली जैसे दिल पर पड़ा हुआ बोझ एक ओर हट गया हो ।

"मेरे पूजा करने के अधिकार को तो तुम छीन नहीं लोगी ?"

"अधिकार—" नम्रता ने क्षण-भर के लिए सोचा फिर एकाएक बोली, "विष्णु ! मैं तुमसे शादी करना चाहती हूँ ।"

"नम्रता—!" विष्णु ने नम्रता को थाम लिया और बड़े मधुर स्वर में बोला, "आज मेरे दिल की बात तुमने कह दी—मुझे ऐसे अनुभव हो रहा है कि जुबान तुम्हारी है और आवाज़ मेरी—।"

"हाँ विष्णु ! मैंने यह निर्णय कर लिया है कि हम दोनों शादी करेंगे—लेकिन मेरे पिताजी ने आज यह बताया है कि वह मेरी मंगनी अपने एक मित्र के लड़के से करना चाहते हैं ।"

"हूँ—।" विष्णु का चेहरा उतर गया—दो ही क्षण की बात थी—और इन दो क्षणों ने विष्णु को उसी स्थान पर ला खड़ा कर दिया था—दुनिया का ताना-बाना भी बड़ा विचित्र है…नम्रता के माता-पिता नम्रता की शादी किसी और से करना चाहते हैं…और

नम्रे... उससे प्यार करती है...उससे शादी करना चाहती है। रानो के माता-पिता रानो का ब्याह विष्णु से करना चाहते थे किन्तु रानो उससे घृणा करने लगी थी—फिर विष्णु स्वयं ही मुस्करा उठा। उसकी मुस्कराहट नम्रता को अच्छी नहीं लगी और उसने जलकर पूछा, "क्या यह बात खुशी की है ?"

"खुशी—नहीं नम्रता, मैं जमाने में संयोग की बात पर मुस्करा रहा था—वरना मुस्कराहट और मेरे होंठों पर !" विष्णु के स्वर में दुःख भर आया था।

अनायास नम्रता ने अपना सिर विष्णु के कन्धे से लगा लिया और आँखें बन्द करके बोली, "विष्णु ! तुम पिताजी से बात करो।"

"तुम्हारा क्या विचार है—वह मान जाएँगे ?"

"शायद—!"

"और अगर न मानें तो—।" विष्णु के स्वर में चिन्ता थी।

"तो—हम भाग चलेंगे—" नम्रता ने आँखें बन्द रखे हुए भावुकता से अपने दिल का फैसला सुना दिया।

"इतना साहस होगा तुममें...?"

"मेरे साहस की बात छोड़ो—अपने दिल की बात करो।"

"नम्रता—मेरे दिल की आवाज़ तुम हो।"

"फिर—।"

"क्या भागकर हम दुनिया से मुक्ति पा सकेंगे ?"

"हम कलाकार हैं—हमें दुनिया की परवाह नहीं।"

"पर दुनिया को तो कलाकार की जरूरत है—।" विष्णु की बात उचित थी।

"क्या मतलब ?" नम्रता चौंकी।

"दुनिया की दृष्टि हम कलाकारों पर होती है—हमारे निजी जीवन पर होती है—वह हमारे चरित्र को देखती और परखती है।"

"तो इसका मतलब हुआ हम बन्दी हैं।"

"हाँ, एक कलाकार दुनिया का बन्दी होता है—उसकी अच्छाई

से दुनिया पाठ ग्रहण करती है—उसकी बुराई उसकी कला और उसके कला-प्रेमियों पर गहरी घृणा छोड़ जाती है—इससे भी वह मिट जाता है—इस सत्य से न तुम इन्कार कर सकती हो और न मैं—।"

"क्या हमारी भावनाएं नहीं—?" नम्रता ने विवाद करना चाहा।

"ज़रूर हैं—किन्तु अगर हमें एक कलाकार के रूप में ज़िन्दा रहना है तो हमें यह धोखा खाना ही पड़ेगा—जानती हो···हिन्दुस्तान के एक प्रसिद्ध कलाकार ने अपने दोस्त की पत्नी से शादी कर ली तो दुनिया उसे घृणा से देखने लगी—एक विख्यात कवियत्री एक कला-कार के साथ भाग गई तो दुनिया ने बड़ी-बड़ी बातें बनाईं—कलाकार का सब-कुछ दूसरों के लिए है—उसका अपना कुछ भी नहीं।" विष्णु ने एक अच्छा-खासा भाषण झाड़ दिया। थोड़ी देर के लिए वह रुका और फिर बोला, "एक कलाकार का चरित्र जग के लिए उदाहरण होता है···कसौटी होता है—हम भाग कर जहाँ भी जाएँगे दुनिया हमारा पीछा करेगी—हमारे प्रशंसक हमसे घृणा करने लगेंगे—एक कलाकार शायद यह सब-कुछ सहन नहीं कर सकता।"

"हूँ—।" नम्रता ने एक लम्बी साँस ली और फिर बोली, "तो इसका यह मतलब हुआ कि हमें अपने आपको दूसरों की दया पर छोड़ देना चाहिए!"

"हाँ—किन्तु किसी सीमा तक।"

"किसी सीमा तक! अर्थात्?"

"प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है—विद्रोह करना हमारे कर्त्तव्य और कला के विरुद्ध है—हमारे करेक्टर, हमारे व्यक्तित्व से मेल नहीं खाता!"

"विष्णु! क्या हम अलग रहकर ज़िन्दा रह सकेंगे?" नम्रता के स्वर में निराशा थी।

"हमारी हार केवल हमारे शरीरों के लिए ज़रूर है लेकिन हमारे आदर्श के लिए मील चिह्न का स्थान रखती है—क्योंकि हो सकता

है कि हम अपने सांसारिक सम्बन्धों की डोर से अपने वजूद को अपने समूचे व्यक्तित्व को कला में लीन कर दें—और हमारी कला उस उत्कर्ष पर पहुँच जाए जहाँ आज केवल हमारी कल्पना ही जा सकती है।"

विष्णु की बातें बड़ी सुलझी हुई थीं किन्तु नम्रता की आँखों में आँसू आ गए थे इसलिए विष्णु ने बात अधूरी रखकर नम्रता के आँसू पोंछते हुए कहा, "दुनिया में अगर कलाकार से कोई बिछुड़ जाए तो बिछुड़नेवाले को दुःख होना चाहिए न कि कलाकार को—क्योंकि कलाकार तो दुनिया से विष लेकर अमृत देता है—इसे उसका कर्त्तव्य समझ लो या भाग्य···।"

"विष्णु नाव वापस ले चलो—।"

"नम्रता चिन्तित होने की बात नहीं—मैं कल तुम्हारे पिताजी से तुम्हें माँगूंगा—मगर उन्होंने इन्कार कर दिया तो उनके पाँव पकड़ लूंगा—और मेरा मन कहता है कि वह इन्कार नहीं करेंगे।"

यही सान्त्वना नम्रता के डूबते दिल के लिए काफी थी—उसके आँसू रुके तो हिचकी बँध गई—और नाव वापस किनारे की ओर बढ़ने लगी—आकाश में प्रकाश फैल चुका था।

जब नम्रता घर पहुँची तो उसे मालूम हुआ कि उसके पिताजी को बुखार ने आ घेरा है। शाम की चाय पीने के बाद उनकी तबियत एकाएक खराब हो गई थी और इस समय बहुत तेज बुखार था। नम्रता सब-कुछ भूलकर पिताजी की देखभाल में लग गई।

□

परिस्थितियों ने कोई नई करवट न ली। नम्रता के पिताजी की बीमारी लम्बी होती गई और उन्होंने ब्रिज और बाली की शादी अगस्त में निश्चित कर दी। विष्णु और नम्रता लक्ष्मणदास जी से अपने भविष्य के बारे में कुछ न कह सके। समय झट बीत गया और ब्रिज की शादी के दिन समीप आ गए। इस शादी पर लक्ष्मणदास जी के मित्र की पत्नी और उनके लड़के आनन्द ने भी आना था और

तभी नम्रता और आनन्द की सगाई की घोषणा होनी थी। सब-कुछ जानते हुए भी नम्रता चुप थी। डाक्टरों ने बताया था कि लक्ष्मणदास जी को ब्लड प्रैशर का रोग है और इस बीच में अगर उन्हें कोई आघात पहुंचा तो उनकी दशा बिगड़ सकती थी। इसी कारण घर का कोई आदमी उनकी किसी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर रहा था —वह जो-कुछ भी चाहते वही हो रहा था—इस बीमारी में नम्रता के दिल की खुशी दबती चली जा रही थी। वह सब-कुछ जानते हुए भी मौन थी—आखिर वह अपने दिल की बात किससे कहे—उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।



शादी की गहमा-गहमी आरम्भ हो गई। कुछ दूर के सम्बन्धी आ जाने से कोठी में अजीब रौनक-सी आ गई थी। व्रिज इस शादी से बहुत प्रसन्न था। व्रिज और बाली प्रायः मिलकर शापिंग करते और अपने भविष्य के बारे में बातें करते। नम्रता को यह विचित्र-सा लगता। नम्रता के मौन और चुप रहने को उन्होंने उसकी प्रवृति समझ लिया इसलिए कोई भी उसके मन का हाल जानना नहीं चाहता —वह सबके पास होकर भी उससे दूर थे।

दूसरी ओर बिष्णु उदास और चिन्तित सा था—आखिर वह किससे बात करे—एक दिन विष्णु ने नम्रता को समझाया कि वह अपनी माँ से दिल का हाल कह दे। पहले तो नम्रता न मानी किन्तु फिर एक दिन मन के हाथों विवश होकर उसने माँ से अपनी और विष्णु के प्यार की बात कह ही दी। पहले तो बेटी के मुंह से ऐसी बात सुनकर उसकी माँ चौंकी किन्तु फिर धीरे-धीरे शान्त हो गई और समझाने लगी।

"बेटी नम्रता! तू तो जानती है कि तेरे डैडी अपनी हठ के कितने पक्के हैं—"

"मम्मी! क्या आप चाहती हैं कि मैं जीवन भर आंसू बहाती रहूँ—मम्मी! जब आप मुझे उच्च शिक्षा दिला सकती हैं तो क्या

मुझे स्वयं अपना जीवन-साथी चुनने की अनुमति नहीं दे सकतीं—?"

"बेटी—पूरब-पूरब है और पश्चिम पश्चिम—हमने तुम्हें स्वतन्त्रता तो दे रखी है किन्तु इन मामलों में हमारे विचार वही हैं जो पहले थे—रही तुम्हारे भविष्य की बात सो माता-पिता जो करते हैं भलाई के लिए ही करते हैं—फिर आनन्द में कोई दोष नहीं···कोई अवगुण नहीं—अच्छा शिक्षित और अच्छी पोस्ट पर लगा है। मां-बाप का अकेला लड़का है—।" नम्रता की मां आनन्द का गुणगान करने लगी।

नम्रता ने कुछ देर के लिए संकोच से काम न लेते हुए कहा, "लेकिन इन सब चीजों से मन की खुशी तो नहीं मिलती।"

"नम्रता! तुझे सुखी देखने के लिए अगर मेरे प्राण भी चले जाएँ तो मेरी आत्मा सुखी होगी—लेकिन तेरे पिताजी को इस समय कुछ कहना उनकी मौत का रिस्क लेने के बराबर है—और फिर मैं स्वयं भी विष्णु के बारे में कुछ नहीं जानती—वह किस खानदान से है—?"

"मम्मी! क्या किसी का अच्छा या बुरा होना केवल उसके खानदान पर निर्भर है?" नम्रता मां से बहस करने पर तुली हुई थी।

"खानदान से अन्तर जरूर पड़ता है—इस बात से तुम इन्कार नहीं कर सकती।" नम्रता की मम्मी ने अपने मन की बात कह दी किन्तु एक प्रश्न जो उनके मस्तिष्क को सुन्न कर चुका था—वह अभी तक उनकी समझ में न आ रहा था।

"मम्मी—" नम्रता ने सिसकी ली।

"बेटी! घबराने की कोई बात नहीं—अभी तेरी मां जिन्दा है—मैं तेरे पिताजी से साफ़ ही बात करूँगी।" नम्रता की मां ने प्यार से नम्रता के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—और नम्रता की आंखों से गंगा-जमना की धारा बह निकली। मां ने बेटी के दुःख को अनुभव किया।

तभी नौकर कमरे में आया और बोला, "बीबीजी—बड़े बाबूजी आपको बुला रहे हैं।"

"अच्छा—।" नम्रता की मां अपने स्थान से उठी।

"मम्मी—!" नम्रता ने एक बार फिर मन की बात कहनी चाही।

"धैर्य रखो—मैं अभी बात करती हूं।" नम्रता की मां ने कहा और कमरे से निकल गई।

"पिताजी के कमरे में कौन-कौन है ?" नम्रता ने नौकर से पूछा।

"केवल बड़े बाबूजी और छोटे बाबूजी—और कोई नहीं—और मुझसे कहा है कि किसी और को कमरे में मत आने दूं—" शायद नौकर को अपनी ड्यूटी याद आ गई थी···इसलिए नौकर वहां से भाग खड़ा हुआ।

नम्रता के दिल से आवाज़ आई कि उसके भाग्य का फ़ैसला अभी इसी घड़ी हो जाएगा—कोई विशेष विचारणीय बात ही होगी जो नौकर को पिताजी ने कमरे के बाहर पहरा देने के लिए कहा है।

नम्रता धीरे से उठी और मां के कमरे की ओर बढ़ गई। उसकी मम्मी और पिताजी के कमरे साथ-साथ थे और दोनों कमरों को एक बीच का द्वार मिलाता था। नम्रता ने मां के कमरे में पहुंचकर बीच का द्वार बन्द कर दिया और उसके साथ लगकर खड़ी हो गई—पिताजी के कमरे में होती सब बातें उसे स्पष्ट सुनाई दे रही थीं।

नम्रता के पिताजी कह रहे थे, "आनन्द की मां की चिट्ठी आई है कि आनन्द को छुट्टी नहीं मिल सकी इसलिए वह इस शादी में सम्मिलित नहीं हो सकेगा—साथ ही आनन्द की मां ने आनन्द की तस्वीर भेजी है जो मुझे और व्रिज को पसन्द है—रहा आनन्द को देखने का प्रश्न···आज से एक बरस पहले मैंने और तुमने उसे देखा था इसलिए दोबारा मैं यह ज़रूरी नहीं समझता—क्यों व्रिज—!"

"पिताजी आप ठीक कह रहे हैं—लड़का अच्छा है और फिर अच्छी पोस्ट पर लगा हुआ है—मेरे विचार में नम्रता के लिए इससे

च्छा घर मिलना मुश्किल होगा।"—यह ब्रिज की आवाज थी जो पनी राय दे रहा था।

द्वार के इस पार बैठी नम्रता को यूँ अनुभव हो रहा था जैसे सके सामने उसका घोंसला फूँका जा रहा हो और वह एक दर्शक समान चुपचाप बैठी अपने दुर्भाग्य का यह खेल देखने पर विवश ी।

"मैं एक बात कहना चाहती हूँ—" नम्रता की मम्मी की आवाज आई।

"कहो—।"

"अगर मैं नम्रता की शादी यहाँ न करना चाहूँ?"

"क्या—तेरा दिमाग तो नहीं खराब हो गया?" नम्रता के पिता लक्ष्मणदास जी ऊँची आवाज में चिल्लाए।"

"मेरी बात तो सुनिए—।" नम्रता की माँ ने पति को देखते हुए धीरे-से कहा। "आनन्द मिलिट्री में काम करता है।"

"यह कोई दलील नहीं—क्या मिलिट्री में काम करने वालों की शादियाँ नहीं होती?" लक्ष्मणदास फिर तीखे स्वर में बोले।

"अगर मुझे लड़का पसन्द न हो तो—?"

"मैंने तेरी राय पूछने के लिए तुझे नहीं बुलाया—मैं केवल इतना कहना चाहता हूँ कि आनन्द की माँ ने लिखा है कि वह आनन्द की शादी इसी वर्ष करना चाहती है—मुझे और ब्रिज को यह स्वीकार है—इतना अच्छा सुशील लड़का—अच्छी पोस्ट—जानती हो वह इसी आयु में मेजर बन गया है तो रिटायर होने तक कहाँ तक जा पहुँचेगा—और फिर आजकल कोई लड़ाई का जमाना नहीं—समझी।" लक्ष्मणदास जी क्रोध से बोले।

ब्रिज ने धीरे-से माँ से पूछा, "पर मम्मी तुम्हें यह लड़का क्यों पसन्द नहीं?"

"मेरी पसन्द की बात नहीं—" मम्मी ने कुछ कहना चाहा कि फिर सोचकर बोली, "आपका विष्णु के बारे में क्या विचार है?"

"विष्णु—।" लक्ष्मणदास जी और ब्रिज दोनों चौंके—फिर लक्ष्मणदास बोले, "तू कहीं पागल तो नहीं हो गई—उस आर्टिस्ट की बात कर रही है जो आज तक अपनी रोटी भी नहीं कमा सका—यह ठीक है लड़का ईमानदार और भला है लेकिन वह कौन है ? किस खानदान से है ?—आखिर ऐसी बात तुझे कैसे सूझी ?"

"मुझे विष्णु बहुत पसन्द है।"

"पसन्द का यह मतलब नहीं कि हम उसे अपना जमाई बना लें —मूर्ख कहीं की···।"

"अगर मैं मूर्ख थी तो मुझे बुलाया ही क्यों था ?"—झगड़ा कुछ बढ़ रहा था।

"मुझे क्या मालूम था कि तू इतनी छोटी बात सोचेगी—एक आर्टिस्ट और मेजर की क्या तुलना।"

"अगर नम्रता विष्णु से शादी करना चाहती हो ?"

"खामोश !" लक्ष्मणदास जी का चेहरा गुस्से से लाल हो गया, "नम्रता कहाँ है उसे बुलाओ।"

इधर नम्रता द्वार से लगी बेंत की भाँति काँप कर रह गई—उसकी आँखों में से आँसू टपकने लगे थे।

"मम्मी ! क्या यह नम्रता ने आप कहा है ?" इस बार ब्रिज मम्मी से सम्बोधित हुआ।

"अगर बच्चा कहे कि हमें चाँद पकड़ दो तो वह हम पकड़ कर नहीं दे सकते—वह पागल लड़की क्या जाने कि ज़िन्दा रहने के लिए किन-किन चीजों की जरूरत होती है—विष्णु जो अपने लिए रोटी नहीं कमा सकता वह दूसरे का पेट क्या भर सकता है—मेरी आज़ादी का यह मतलब नहीं कि यह सब अपनी मनमानी करते फिरें—जाओ यहाँ से—नम्रता की शादी आनन्द से होगी···वह भी इसी दिसम्बर में—यह मेरा अन्तिम फ़ैसला है।"

"पिताजी ! आप कुछ सोच-समझकर फ़ैसला करें—नम्रता कोई बच्ची नहीं।" ब्रिज ने नम्रता का पक्ष लेना चाहा।

"तुम बच्ची कहते हो, मैं कहता हूँ वह पागल है जो एक भूखे आर्टिस्ट को एक मेजर से अच्छा समझे—वह भावुक लड़की है और बिना सोचे-समझे फ़ैसला कर देती है।" लक्ष्मणदास ने ब्रिज को समझाते हुए कहा।

"मगर पिताजी—अगर नम्रता ने इस शादी से इन्कार कर दिया—तो—।" ब्रिज ने पिताजी को चेतावनी देते हुए कहा।

लक्ष्मणदास गुस्से में चिल्ला उठे, "उसका इतना साहस···मैं प्राण दे—" इससे पहले कि लक्ष्मणदास अपना वाक्य पूरा करते उन्हें दौरा पड़ गया। ब्रिज ने भागकर उन्हें थामा। इधर नम्रता ने उठकर दरवाज़ा खटखटाना चाहा किन्तु रुक गई।

फिर नम्रता ने जल्दी से ड्राइंग-रूम में आकर डाक्टर को फ़ोन किया—और स्वयं भी पिताजी के कमरे की ओर भागी—उसके कमरे में पहुँचने से पहले कई रिश्तेदार वहाँ पहुँच चुके थे—लेकिन दौरा क्यों पड़ा···किस कारण से पड़ा—कोई भी न जान सका—और न ही नम्रता की माँ और ब्रिज यह बात किसी रिश्तेदार को बताना चाहते थे।

डाक्टर आया—उसने इन्जेक्शन लगाया और फिर ब्रिज और उसकी मम्मी से बोला, "मैंने आपसे पहले भी कहा था···कि इन्हें किसी बात से चिन्तित नहीं किया जाए···या कोई ऐसी बात न कही जाए जो इनकी इच्छा के विरुद्ध हो—यह बहुत ख़तरनाक दौरा है—ऐसा कोई दौरा इनके प्राण ले सकता है।"

"प्राण ले सकता है—।" नम्रता के कानों में डाक्टर के यह शब्द पड़े और वह काँप कर रह गई—क्या वह उसी के कारण पिताजी की यह हालत हुई है—क्या वह पिताजी की मौत का कारण बन रही है? क्या उनके माता-पिता ने इसीलिए पाल-पोसकर बड़ा किया है कि वह उन्हें दुःख दे—? इन्सान तो वह है जो स्वयं दुःख झेलकर दूसरों को सुख दे—क्या उसके बलिदान से इस घर का वा[illegible]ावना हो सकता है?—अगर ऐसा है तो उसे अपने 'प्रेम' [illegible]

"विष्णु—।" लक्ष्मणदास जी और व्रिज दोनों चौंके—पि
लक्ष्मणदास बोले, "तू कहीं पागल तो नहीं हो गई—उस आर्टिस्ट
बात कर रही है जो आज तक अपनी रोटी भी नहीं कमा सका—
ठीक है लड़का ईमानदार और भला है लेकिन वह कौन है ? कि
खानदान से है ?—आखिर ऐसी बात तुझे कैसे सूझी ?"

"मुझे विष्णु बहुत पसन्द है।"

"पसन्द का यह मतलब नहीं कि हम उसे अपना जमाई बना
—मूर्ख कहीं की…।"

"अगर मैं मूर्ख थी तो मुझे बुलाया ही क्यों था ?"—झग
कुछ बढ़ रहा था।

"मुझे क्या मालूम था कि तू इतनी छोटी बात सोचेगी—ए
आर्टिस्ट और मेजर की क्या तुलना।"

"अगर नम्रता विष्णु से शादी करना चाहती हो ?"

"खामोश !" लक्ष्मणदास जी का चेहरा गुस्से से लाल हो गय
"नम्रता कहाँ है उसे बुलाओ।"

इधर नम्रता द्वार से लगी बेंत की भांति कांप कर रह गई
उसकी आंखों में से आंसू टपकने लगे थे।

"मम्मी ! क्या यह नम्रता ने आप कहा है ?" इस बार व्रि
मम्मी से सम्बोधित हुआ।

"अगर बच्चा कहे कि हमें चांद पकड़ दो तो वह हम पकड़
नहीं दे सकते—वह पागल लड़की क्या जाने कि ज़िन्दा रहने के
किन-किन चीज़ों की ज़रूरत होती है—विष्णु जो अपने लिए
नहीं कमा सकता वह दूसरे का पेट क्या भर सकता है—मेरी आ
का यह मतलब नहीं कि यह सब अपनी मनमानी करते फिरें—
यहाँ से—नम्रता की शादी आनन्द से होगी…वह भी इसी
में—यह मेरा अन्तिम फ़ैसला है।"

"पिताजी ! आप कुछ सोच-समझकर फ़ैसला करें—
बच्ची नहीं।" व्रिज ने नम्रता का पक्ष लेना चाहा।

चाहिए—जीवन की आहुति देनी चाहिए—स्वयं असफलता में खोकर जीवन को ऊँचे आदर्श में खोजना चाहिए—क्या प्यार का मतलब केवल 'प्रेमी' को पा लेना ही होता है—? नहीं, नहीं—नम्रता बड़-बड़ाकर रह गई—और जब उसने ऊपर दृष्टि उठाई तो वह अकेली द्वार के पास खड़ी थी—सभी रिश्तेदार उसके पिता के पास बैठे हुए थे—डाक्टर उन पर झुका हुआ कुछ निरीक्षण कर रहा था।

नम्रता अपने स्थान से हठी और पिताजी के सिरहाने आकर खड़ी हो गई—उसकी आँखों में आँसू थे—

अढ़ाई घण्टे के बाद नम्रता के पिताजी को होश आया और उन्होंने जब आँखें खोलीं तो सबसे पहले उन्होंने अपनी बेटी नम्रता को देखा जो उनसे लिपटी हुई थी—उन्होंने प्यार से अपना हाथ उसके सिर पर फेरा और निर्बल स्वर में बोले…" धीरज रखो बेटी…।"

"पिताजी—!" नम्रता चिल्लाई।

लक्ष्मणदास जी ने उसके आँसू पोंछे और धीरे-से बोले, "मैं जानता था तेरी माँ ठीक नहीं कह रही—वरना मेरी बेटी ऐसी नहीं हो सकती।"

कोई कुछ न समझा था और जिन्होंने समझना था समझ लिया था—

डाक्टर ने ब्रिज को कुछ आदेश दिए और चला गया।

छः

आकाश काले बादलों से ढका हुआ था—ठण्डे और विभोर कर देने वाले हवा के झोंकें उदास और मलीन नम्रता को कुछ सांत्वना दे रहे थे। नम्रता ने कमरे को निहारा…हर चीज़ सुन्दरता से रखी, कलात्मक ढंग से सजी थी। बड़े डबल पलंग के पास तिपाई पड़ी थी जिस पर टेबल-लैम्प रखा कमरे को प्रकाशमान बना रहा था…सेज

पर गुलाब की बिखरी हुई पत्तियाँ फैली थीं···कमरा भीनी-भीनी सुगन्ध से भरा था।

नम्रता इस कमरे में—इस वातावरण में अजनबी बनकर आई थी—और अब उसे अपना पूरा जीवन इसी वातावरण में इन्हीं लोगों के साथ बिताना था—लेकिन क्या वह विष्णु को भूल जायेगी···?···क्या? यही एक प्रश्न बार-बार उसके मस्तिष्क में घूम रहा था क्योंकि अब वह मेजर आनन्द की पत्नी बन गई थी···पवित्र अग्नि के गिर्द फेरे लेकर वह दोनों वर और वधू की डोरी में बँध गये थे। मेजर आनन्द नीचे बैठा अपने दोस्तों के साथ गपशप कर रहा था। नम्रता सिर दर्द का बहाना करके सुहाग के कमरे में ऊपर चली आई थी।

मायके से चलते समय विष्णु ने चुपके से एक चिट्ठी उसकी ओर बढ़ा दी थी···वह कंपकंपाकर रह गई थी···तब वह इन्कार भी न कर सकी थी—उसने काँपते हाथों से चिट्ठी लेकर यूँ छिपा ली थी जैसे कोई माँ अपने बच्चे को गोद में छुपा लेती है।

विष्णु नम्रता की शादी की गहमा-गहमी में सम्मिलित हुआ था—उसके दिल पर क्या बीत रही थी, यह नम्रता ही जानती थी—उसके भावुक मन को नम्रता ने ठेस पहुँचाई थी—उसने विश्वासघात किया था वचन को तोड़ा था और एक बार फिर उसे भटकने पर विवश कर दिया था—लेकिन क्या यह सब-कुछ नम्रता ने अपनी इच्छा से किया था? नहीं···वह बेबस थी—उसने अपनी निर्बलता को विवशता के पर्दे में छुपा लिया था—वह कर भी क्या सकती थी—एक ओर उसके पिता का जीवन···दूसरी ओर उसका प्रेम—एक ओर कर्तव्य और दूसरी ओर भावना···आखिर कर्तव्य भावना पर छा गया और उसने आनन्द के साथ शादी करना स्वीकार कर लिया। आज इस बड़ी दुनिया में

प्रेम मर जाता है ?—प्रेम तो अमर होता है—इन्सान मर जाते हैं लेकिन उनका प्रेम तो नहीं मरता। कोई अपने प्रेमी को ठुकरा दे तब भी वह उसके प्यार को नहीं ठुकरा सकता—फिर नम्रता ने तो विष्णु को नहीं ठुकराया था—ऊपर बैठे खेल रचैता ने अपनी लीला ऐसी रचाई थी कि तिनका-तिनका बिखर गया था।

नम्रता ने कुछ सोचकर इन विचारों से पिंड छुड़ाना चाहा तो उसकी दृष्टि अचानक तिपाई पर रखी हुई आनन्द की तस्वीर पर गई—वह एकाएक सकते में आ गई जैसे उसकी चोरी पकड़ ली गई हो···क्योंकि आनन्द की तस्वीर मुस्करा रही थी—नम्रता ने हाथ बढ़ाकर तस्वीर का मुख दूसरी ओर पलट दिया···तभी हवा का एक तीक्ष्ण झोंका आया और तस्वीर गिरते-गिरते बची।

नम्रता अपने स्थान से उठी और खिड़की की ओर बढ़ी। वहाँ खड़े होकर उसने बाहर अंधेरे में झांका—रात की कालिमा के अतिरिक्त वहाँ कुछ दिखाई नहीं दिया। जाने कितनी देर वहीं खड़ी शीत हवा का आनन्द लेती रही—फिर अचानक वह चौंक उठी—एक कंप-[illegible]-सी उसके शरीर में दौड़ गई—उसकी दृष्टि धोखा नहीं खा [illegible]कती थी—खिड़की से लगभग बीस गज के फ़ासले पर सड़क थी—और सड़क के किनारे लगे बिजली के खम्भे के नीचे विष्णु खड़ा था।

विष्णु—नम्रता के मुंह से हल्की-सी चीख निकल गई—इतनी ठण्ड में विष्णु यहाँ क्या कर रहा है ? वह क्यों आया है ? नम्रता इस खिड़की से हटना चाहती थी लेकिन न जाने कौन-सी शक्ति ने उसके पाँव में जन्जीर डाल दी थी। नम्रता वहाँ से हट न सकी और विष्णु के बारे में सोचने लगी—उसने विष्णु को झूठी सांत्वना देकर आज अपना घर बसा लिया है—क्या उसने दिल से ऐसा चाहा है—नहीं···तभी बिजली की-सी तेजी से उसके मस्तिष्क में वह चिट[illegible] घूम गई जो विष्णु ने उसे अन्तिम उपहार के रूप में दी [illegible] आखिरी निशानी···और वह इस आखिरी निशानी को अ[illegible] पढ़ सकी थी—क्या वास्तव में शादी के बन्धन में बँधने के [illegible]

[illegible] आनन्द को देखा जो धीरे-धीरे पग उठाता उसकी ओर [illegible]। नम्रता ने चिट्ठी पलँग के नीचे फेंक दी—किन्तु उसका [illegible] के कारण धक-धक कर रहा था…माथे पर नन्हीं-नन्हीं [illegible] एकत्र हो गई थीं कि अगर आनन्द ने वह चिट्ठी देख ली तो…तो…

आनन्द नम्रता के समीप आया और नम्रता ने घूंघट की ओट से धड़कते दिल के साथ उसका स्वागत किया। पलँग के पास बिछी कुर्सी पर बैठते हुए आनन्द ने कहा, "अभी तक तो सबके सामने घूंघट नहीं था और अब हमारे सामने यह दीवार खड़ी कर दी।"

नम्रता इसका कोई उत्तर न दे सकी—अभी तक उसके मस्तिष्क में विष्णु छाया हुआ था—उसकी आखिरी चिट्ठी छाई हुई थी—

"आखिर ऐसी मुँह छिपाई भी क्या…यह रुखाई…हमसे…और इस रात…नहीं…।" आनन्द कुर्सी छोड़कर पलँग पर आ बैठा और नम्रता कसमसा कर रह गई।

"सुना है, तुम आर्ट कालिज में पढ़ रही थीं—शादी के कारण तुम्हें कालिज छोड़ना पड़ा—इसका तुम्हें बहुत दुःख हुआ होगा।" आनन्द को आशा थी कि इस बार नम्रता अवश्य उत्तर देगी…लेकिन उसे निराशा हुई।

"नम्रता अपना हाथ बढ़ाओ—।" आनन्द ने जेब से एक सुन्दर डिबिया निकालते हुए कहा—जब नम्रता ने फिर भी हाथ न बढ़ाया तो वह धीरे-से बोला, "आजकल तो गाँव की अनपढ़ लड़कियाँ भी इतना नहीं शर्माती जितना कि तुम—" और दूसरे ही क्षण आनन्द ने बलपूर्वक नम्रता का हाथ पकड़कर उसकी उँगली में प्यार की निशानी अँगूठी डाल दी—नम्रता ने हाथ खींचना चाहा लेकिन आनन्द ने बहुत धीमे स्वर से कहा, "नम्रता! यह सुन्दर रात चन्द ही क्षणों के लिए है किन्तु इसकी स्मृति जीवन-भर बनी रहती है—क्योंकि इस रात दो अजनबी एक डोर में बँधकर हमेशा के लिए एक हो जाते हैं—।"

इस बार भी नम्रता नहीं बोली। आनन्द ने और निकट होकर नम्रता को गुदगुदा दिया। नम्रता के रुके हुए आँसू अनायास बह निकले—और दूसरे ही क्षण आनन्द ने उसका घूँघट उलट दिया—

"अरी पगली तुम रो रही हो···" आनन्द ने अपने रूमाल से नम्रता के आँसू पोंछने चाहे···फिर थोड़ी ही देर बाद नम्रता एक गठरी न रही बल्कि सुन्दर आंचल बन गई जो आनन्द ने अपने गिर्द लपेट लिया—

रात बीत गई···पर रात कैसे बीती···आनन्द या नम्रता को भान भी न हुआ—किन्तु ठंडी हवा के झोंकों की अनुभूति होने पर आनन्द खिड़की के किवाड़ बन्द करने के लिए पलँग से उठ खड़ा हुआ। जब खिड़की को बन्द करके वह पलँग की ओर लौटा तो उसके पाँव अचानक रुक गये क्योंकि उसके पाँव के नीचे एक काग़ज़ का टुकड़ा फड़फड़ा रहा था। आनन्द ने झुककर काग़ज़ उठाया और नम्रता देवी का नाम देखकर चौंक उठा। उसकी आँखें आश्चर्य से फैल गईं।

सामने के पलँग पर नम्रता सपनों के देश में भ्रमण कर रही थी —और आनन्द! उसका तो सिर चकरा गया। अब उसकी समझ में आने लगा कि रात को नम्रता क्यों मौन थी?—उसकी आँखों में आँसू क्यों थे?—लेकिन···

मन ने कहा—'प्यार करना कोई अपराध नहीं—तुमने भी तो एक लड़की से प्रेम किया था और जब तुम्हें यह पता चला कि तुम्हारी प्रेयसी पड़ोसी देश की जासूस है तो तुमने कर्तव्य को सामने रखते हुए प्यार की आहुति दे दी थी।—उस लड़की का क्या अन्त हुआ, आनन्द यह अब तक न जान सका था। निःसन्देह वह अपनी प्रेयसी को खोने से मेजर बन गया···किन्तु क्या वह उस लड़की की छाप को मन से मिटा चुका था? आनन्द ने अपने अन्तर को टोहा···उसकी स्मृति अब भी थी और एकान्त में प्रायः वह मुखड़ा सामने आ ही जाता था—मन पर किसका वश है···और फिर यह तो शादी के पहले की बात है···उनके प्रेम की डोर तो अब बँधी है···फेरे हो जाने के बाद···

छोड़ो देखा जाएगा—आनन्द के मन ने जल्दी निश्चय कर लिया अं इस निर्णय पर उसने फ़ौजी ढंग में सैल्यूट किया।

चिट्ठी को वहीं फेंककर वह पलंग पर लेट गया और मन में उस सोच लिया कि वह तब तक सोता रहेगा जब तक सुबह नम्रता उ कर चिट्ठी उठा न ले—क्यों कि उसको नम्रता को जीतना था…अ प्यार से—सद्भावना से…



सभी रिश्तेदार विदा हो चुके थे—

आनन्द और नम्रता हनीमून मनाने के लिए जयपुर जाने के लि तैयार हो गये। इन तीन दिनों में नम्रता ने अनुभव किया था आनन्द उससे इतना प्यार करने लग पड़ा था जितना विष्णु उस करता था। आनन्द हर समय उसके साथ रहता और उसे उदास न होने देता—उसका मन बहलाए रखता…उसे अपने घर के हाल सुनाता कि आज से आठ-नौ वर्ष पहले उसके पिता की छाया सिर उठ गई थी। माँ ने साहस बँधाकर उसकी शिक्षा पूरी कराई…पि उसने जे०एस० डब्ल्यू की परीक्षा दी और सैकिण्ड लैफ़्टिनैण्ट बन ग …समय के साथ उसकी पदोन्नति होती रही…वह लैफ़्टिनैण्ट अं कैप्टन हुआ—यहाँ पहुँचकर आनन्द प्रायः चुप हो जाता और उदा सा हो जाता—फिर एक दिन नम्रता ने पूछ ही लिया—तो आन ने उसे वास्तविकता बता दी कि वह कैप्टन से इतनी जल्दी मेजर कै बन गया। इस शीघ्रता की प्रोमोशन का एक विशेष कारण था- और नम्रता यह रहस्य जानकर चौंकी नहीं बल्कि सोचने लगी आनन्द कितना महान् इन्सान है जो कर्त्तव्य के लिए प्यार की आहुति दे सकता है—और वह…??—यहाँ पहुँचकर नम्रता तान लम्बी होती…उसे क्या मालूम था कि जिस रहस्य को वह आन से छुपाना चाहती थी वह आनन्द को मालूम हो चुका था।

स्टेशन पर उन्हें सी-ऑफ़ करने के लिए नम्रता के माता-पित उसका भाई और भाभी और आनन्द की माँ आई हुई थीं। जयपु

की यात्रा का निर्णय आनन्द ने नम्रता के परामर्श पर ही किया था क्योंकि आनन्द की पोस्टिंग तो पहले ही एक हिल स्टेशन पर हुई थी इसी बात को समक्ष रखते हुए उन्होंने 'हनीमून' के लिए जयपुर को चुना था।

गाड़ी चलने से पहले आनन्द की माँ ने आनन्द से कहा, "बेटा! मेरी बहू का ध्यान रखना···उसे उदास मत होने देना।"

नम्रता माँ के प्यार और स्नेह पर मन-ही-मन मुस्कराई कि तभी आनन्द ने धीरे-से कहा, "मेरा ध्यान कौन रखेगा?"

यह बात केवल नम्रता ही सुन सकी। लाज से उसने गर्दन नीची कर ली···इतने में विज उनके पास आया और बोला, "मिस्टर आनन्द! गाड़ी के चलने का समय हो गया है···।" उसने हरे सिगनल की ओर संकेत किया।

आनन्द और नम्रता सबसे विदा लेकर शीघ्रता से गाड़ी में सवार हुई ही थी कि इंजन ने व्हिसल दी और गाड़ी ने रेंगना आरम्भ कर दिया। जब तक प्लेटफार्म आँखों से ओझल नहीं हो गया आनन्द और नम्रता खिड़की में से सफेद रूमाल हिलाते रहे और उत्तर में विदाई और शुभ कामनाओं के लहराते हुए सफ़ेद रूमाल देखते रहे। प्लेटफॉर्म दूर हो गया तो आनन्द ने नम्रता को कन्धे से पकड़ा और बोला, "आओ—यहाँ बहुत ठण्ड महसूस हो रही है—माँ ने मुझे तुम्हारी देखभाल के लिए साथ भेजा है—।"

नम्रता ने आनन्द की आँखों में देखा और फिर आनन्द की बात को काटकर बोली, "माँ जी ने मुझे आपकी देखभाल के लिए भेजा है—चलिए, मैं आपका बिस्तर लगाती हूँ।"—नम्रता ने कम्पार्टमेंट का दरवाजा बन्द किया और पलटकर देखा तो आनन्द बिस्तर ठीक कर रहा था।

"यह आप क्या कर रहे हैं?" नम्रता ने बढ़कर चादर उनके हाथ से लेते हुए कहा।

"अपनी ड्यूटी निभा रहा हूँ।"

"आप मुझे शर्मिन्दा कर रहे हैं।"

"क्यों ?"

"मेरे होते हुए आप बिस्तर बिछाएँ···मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"नम्रता ! बिस्तर तुमने बिछाया या मैंने कोई अन्तर नहीं पड़ता—।"

"क्या मतलब ?" नम्रता जानकर अनजान बन गई।

"मतलब यह कि···" आनन्द ने हँसकर कहा, "बिस्तर एक है —इस पर हम—"

इससे पहले कि आनन्द वाक्य पूरा करता कि नम्रता चिल्लाई, "हमें ऐसी बातें पसन्द नहीं···।"

"हमें तो पसन्द हैं···।"

"फिर वही—।"

"कान पकड़ता हूँ—" और सचमुच आनन्द ने अपने दोनों कान पकड़ लिए।

नम्रता उसके साथ लगते हुए बोली, "जनाब ! कान···छोड़ दीजिए···"

"आप ही ने सजा दी थी—" और दूसरे ही क्षण आनन्द ने नम्रता को अपनी ओर खींचा—और नम्रता कटी हुई शाखा के समान आनन्द पर गिर पड़ी—

गाड़ी काली ठण्डी सुहानी रात में मंजिल की ओर बढ़ती गई।

☐

आनन्द का प्यार पाकर नम्रता विष्णु के प्यार को भूलने लगी। आनन्द उसे पहले से भी बढ़कर प्यार करने लगा था। हर क्षण वह उसका ध्यान रखता ताकि उसे तनिक भी असुविधा न हो। इस समय वह दोनों हवाई महल की सबसे ऊँची मंजिल पर खड़े थे···शीत हवा के तेज झोंके आ रहे थे जिनके कारण ठिठुरन-सी अनुभव होती थी नम्रता ने खिड़की से नीचे सड़क की ओर झाँका तो ऊँचाई का अनुमान लगाकर उसका दिल काँपकर रह गया। गाईड जो अब त:

आनन्द से बातें कर रहा था नम्रता को सम्बोधित करता हुआ बोला, "देखिए···यह सारा महल ख़ास वेण्टीलेशन के ढंग पर बना हुआ है। उस ज़माने में बिजली नहीं थी और गर्मियों के दिनों में राजे-रानियाँ यहाँ बैठकर हवा का आनन्द लेते थे—इसी कारण इसका नाम हवाई महल पड़ गया है—और वह नीचे उल्टी-सीधी जो इमारत दिखाई दे रही है, उसको 'जन्तर-मन्तर' कहते हैं—और उधर, वह बड़ी इमारत जो उल्टे चाँद के समान बनी हुई है उस समय घड़ी का काम देती थी—सूरज की किरणों द्वारा समय आँका जाता था—।"

गाईड बतला रहा था···आनन्द और नम्रता सुन रहे थे। ठण्ड महसूस करते हुए नम्रता ने नीचे चलने के लिए कहा। बारहदरी में पहुँचकर आनन्द ने गाईड से कहा कि कुछ देर वे यहीं सुस्ताना चाहते हैं इसलिए वह उनके लिए चाय भिजवा दे।

"अच्छी बात है—" कहकर गाईड चला गया।

आनन्द नम्रता को उस बेंच की ओर ले गया जो हरी घास पर बिछा हुआ था—और अपना कोट उतारकर घास पर लेटते हुए बोला, "आज से कई सौ वर्ष पहले हिन्दोस्तान में वास्तुकला किस उत्कर्ष पर थी।"

"सचमुच यह महल दर्शनीय और प्रशंसनीय है—" नम्रता ने कहा।

उसे गाँधकार में गया।

वह सात दिन कैसे बीते इसका उन्हें अनुमान भी न हुआ—इन सात दिनों ने आनन्द और नम्रता को एक-दूसरे के इतना समीप कर दिया कि अब नम्रता के मन में विष्णु का विचार भी कभी भूले ही से आता था और वह भी तब जब वह अकेली होती—लेकिन आनन्द उसे अकेला रहने का अवसर ही कहाँ देता था—आनन्द ने अपना सब-कुछ हारकर नम्रता को जीतने का निश्चय किया था···प्यार से जीतने का निश्चय···और आज वह इस काम में सफल होता दीख रहा था।

वापसी पर आनन्द को सूचना मिली कि उसकी ट्रांसफ़र फ़ीरोज़पुर स्टेशन पर हो गई है इसलिए उसने माँ को और नम्रता को भी साथ ले जाने का फ़ैसला कर लिया। आनन्द का अपना एक निजी मकान चण्डीगढ़ में था और आनन्द की शादी के लिए उसकी माँ ने दिल्ली में एक मकान किराये पर ले लिया था। अब आनन्द की माँ वापस चण्डीगढ़ लौट जाना चाहती थी कि आनन्द ने उसे अपने साथ ले जाने का फ़ैसला कर लिया और माँ भी इसलिए सहमत हो गई कि आनन्द जब दफ़्तर जायेगा तो नम्रता अकेली घर में होगी—और यही विचार आनन्द का भी था जिसके लिए वह माँ को साथ चलने के लिए अनुरोध कर रहा था।

निर्णय यह हुआ कि पहले सभी चण्डीगढ़ चलें—वहाँ दहेज का सामान अपने निजी मकान में रख दिया जाए और जरूरी सामान साथ ले लिया जाए—इसी बहाने नम्रता भी उसका मकान देख लेगी—

चण्डीगढ़ रवाना होने से पहले एक दिन सभी नम्रता के माता-पिता के घर में आमन्त्रित थे···वहीं नम्रता को कहीं से पता चला कि विष्णु स्टूडियो बन्द करके कहीं चला गया है—कहाँ ? यह किसी को ज्ञात नहीं था—नम्रता जितनी देर वहाँ रही उसे विष्णु का ध्यान आता रहा लेकिन ज्योंही उसने मायके की दहलीज छोड़ी साथ ही

ण् का विचार भी छोड़ दिया।

प्रोग्राम अनुसार वह लोग डी-लक्स बस द्वारा चण्डीगढ़ के लिए ाना हो गए। सामान ट्रक द्वारा पहले ही बुक करा दिया गया था।

चण्डीगढ़ पहुँचकर नम्रता को ऐसे लगा कि अब तक उसने यह र नगरी न देखकर अपने साथ अन्याय किया है—इतना विशाल ना सुन्दर शहर—खुली-खुली सड़कें…पार्क…नये-नये डिजाइन की -से-एक बढ़िया कोठी—दूर दिखाई देते कसौली के पहाड़…चंडी- …रोज गार्डन…नम्रता इस शहर से बहुत प्रभावित हुई।

एक शाम आनन्द और नम्रता झील पर सैर करने गये तो वहाँ नन्द के दूसरे दोस्त भी मिल गये…सभी ने मिलकर एक बड़ी बोट राये पर ली और झील के स्थिर जल पर उनकी बोट हिचकोले ती हुई बढ़ने लगी। आनन्द के एक दोस्त ने कहा, "भाभी साहब ! ई गीत हो जाए आपके मुँह से…।"

"जी—।" नम्रता घबराकर बोली।

"जी हाँ—समय और वातावरण की भी यही माँग है…" आनन्द मुस्कराकर समर्थन किया, "कि इस रंगीनी को और रंगीन और हावना बना दिया जाए"

"लेकिन मैं—।" नम्रता ने पीछा छुड़ाना चाहा।

"आपके स्थान पर मैं होता तो झट सुना देता…आनन्द ने उसे क्य पूरा न करने दिया और बोला।

"तो फिर आप ही सुना दीजिए…और यह भी कल्पना कर जिए कि आप मेरे ही स्थान पर हैं…" नम्रता ने उत्तर दिया जिस- र सभी खिलखिलाकर हँस पड़े।

आनन्द ने एक गीत सुनाया और नम्रता आश्चर्य से उसे देखती ह गई। उसे नहीं पता था कि आनन्द इतना सुन्दर गा लेता है— धुर आवाज…उसमें विशेष छुपी हुई वेदना…समाँ बँध गया… ट धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी और आनन्द का गीत नम्रता के मन बैठता जा रहा था—वह अनुभव कर रही थी कि आनन्द को पाकर

उसने बहुत बड़ी निधि पा ली है—

आनन्द के बाद नम्रता को भी एक गीत सुनाना पड़ा जिसकी सबने दिल खोलकर प्रशंसा की···

काफ़ी रात गए वह घर लौटे तो मकानों के दलाल ने आनन्द को सूचना दी कि उसने आनन्द के मकान के लिए एक किरायेदा ढूंढ लिया है।

दूसरे दिन आनन्द नम्रता और माँ को लेकर अपने ड्यूटी स्टेश के लिए रवाना हो गया। जाने से पहले उसने घर की चाबी दल को दे दी और उसे निर्देश कर दिया कि वह किरायेदार को मक में बिठा दे और किराया बैंक में जमा करवा के उसे बैंक रसीद भि दिया करे।



जहाँ आनन्द की पोस्टिंग हुई थी वह हिल स्टेशन था—‍ पहाड़—सर्वत्र हरियाली-ही-हरियाली दिखाई देती—ऊँचे-ऊँचे चीड़ और देवदारू के वृक्षों के बीच घिरा हुआ मकान था जो को मिला था।

नम्रता इस स्थान पर आकर धीरे-धीरे अपना अतीत भूल और उस प्रेम में खोने लगी जिसका स्रोता आनन्द के दिल की में से निकलता था। जहाँ नम्रता को एक प्यार करने वा मिला था वहाँ नम्रता की सास और देवी भी एक माँ थी गोद में सिर रखकर नम्रता को यूं अनुभव होता था जैसे व माँ की गोद में लेटी हो।

सात

"फिर वही···" माँ ने बड़े स्नेह से नम्र का प्रयत्न किया।

"माँ जी—।" नम्रता मुस्करा पड़ी।

"नम्मो ! तुम्हें कितनी बार कहा है कि यह सब तुम न किया करो—मैं हूँ—नौकर है—।"

"माँ जी ! आप काम करें और मैं देखती रहूँ—यह मुझसे न होगा—" नम्रता ने प्यार से अपनी बाँहें सास के गले में डाल दीं।

"बेटी—इन दिनों अधिक काम करना अच्छा नहीं—" माँ ने नम्रता का माथा चूमते हुए कहा।

तभी आनन्द कमरे में प्रविष्ट हुआ और नम्रता और माँ जी को इस दशा में देखकर बोला, "सॉरी···" और जाने के लिए मुड़ा।

"कहाँ चला ?" माँ ने मुस्कराते हुए रोका।

"जहाँ हमारे विरुद्ध षड्यन्त्र हो रहा हो वहाँ हमारा क्या काम ?"

"षड्यन्त्र के बच्चे ! घर जल्दी आ जाया कर—नम्रता अकेली घबरा जाती है—तू क्लब में बैठा रहता है और यह नहीं सोचता कि कोई तेरी प्रतीक्षा कर रहा है।" माँ ने प्यार से डाँटा।

आनन्द सोफे के पास आकर बड़े विनम्र ढंग से बोला, "माँ जी ! मैंने कई बार नम्रता को क्लब चलने के लिए कहा किन्तु यह स्वयं ही नहीं जाती।"

"ठीक ही करती है—" माँजी ने बहू का पक्ष लेते हुए कहा।

"अच्छा···नम्रता का जादू यहाँ तक पहुँच चुका है।" आनन्द हँसते हुए बोला।

इतने में नौकर ने चाय लाकर तिपाई पर रख दी और नम्रता कनखियों से आनन्द की ओर देखकर चाय बनाने लगी।

"बाप बनने वाला है···कुछ तो जिम्मेवारी समझ।" माँ यह कहती हुई पूजा वाले कमरे की ओर बढ़ी।

यह बात सुनकर आनन्द की आँखें नम्रता पर केन्द्रित हो गईं। नम्रता ने चाय का प्याला आनन्द की ओर बढ़ाते हुए कहा, "आप मेरी ओर घूरकर क्या देख रहे हैं ?"

"तुम माँ बनने वाली हो—" आनन्द ने अनायास कहा तो नम्रता—

ने लाज से गर्दन झुका ली। आनन्द उसके पास आया और चाय का प्याला थाम कर बोला, "हम आप पर इतना विश्वास करें और जनाब हमीं से छुपाएँ···।"

"जी—!" नम्रता ने हँसते हुए कहा।

"अच्छा नम्रता, एक बात तो बताओ—।"

"क्या ?"

"लड़का होगा या लड़की ?"

"आपको क्या चाहिए ?"

"मेरे चाहने से क्या होगा ?"

"फिर पूछने से लाभ ?"

"तो मुझे यह पूछना नहीं चाहिए—वैसे लड़का होगा।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब···" आनन्द ने ठण्डी आह भरी और बोला, "हमारी चार पीढ़ियों से यही होता आ रहा है—पहला लड़का—और इसके बाद—।"

"और उसके बाद—क्या···?" नम्रता के हाथ काँप से गए।

"छुट्टी—।" आनन्द ने इतने भोलेपन से कहा कि नम्रता की हँसी छूट गई।

"सच कह रहा हूँ—विश्वास न आए तो माँ जी से पूछ लेना—मेरे परदादा का कोई भाई नहीं था—फिर मेरे दादा उनके अकेले बेटे थे···मेरे डैडी भी अकेले थे—और यह सरकार भी अकेली तशरीफ़ लाई।" आनन्द ने झुककर कहा।

"तो क्या यह लक्ष्मण रेखा निश्चित है—बस ?"

"क्या तुम्हें अधिक बच्चे चाहिए ?" आनन्द ने अचानक पूछा।

नम्रता शरमा गई और चाय के खाली प्याले को तिपाई पर रखते हुए बोली, "आप तो बस दूसरे को लज्जित कर देते हैं।"

"यहाँ कोई दूसरा थोड़े ही बैठा है—हम दोनों के अतिरिक्त यहाँ कौन है ?"

"कोई है—।" नम्रता ने बात को रहस्यमयी बना दिया।
"कौन···?" आनन्द ने इधर-उधर देखते हुए कहा।
"आपका लड़···।"
"ओ—" आनन्द ने जी खोलकर ठहाका लगाया—नौकर कमरे खाली बर्तन लेने आया।
"चलो—तैयार हो जाओ—जरा घूमने चलते हैं—।" आनन्द पने स्थान से उठकर ड्रेसिंग-रूम की ओर बढ़ गया ताकि यूनिफार्म तार कर दूसरे कपड़े पहन ले—नम्रता भी उठकर कपड़े बदलने गी।



नम्रता के हाँ चाँद जैसे लड़के ने जन्म लिया—लेकिन अभी वह दिल खोलकर खुशियाँ भी न मना पाए थे कि अचानक ब्रिज का तार या कि पिताजी स्वर्गवास हो गए हैं—नम्रता अभी कमजोर थी सलिए वह दिल्ली न जा सकी···केवल आनन्द चला गया।
रो-रोकर नम्रता ने बुरा हाल कर लिया था। उसकी सास ने ान्त्वना देते हुए कहा, "बेटी! धीरज रखो—वही होता है जो गवान् को स्वीकार होता है।"—लेकिन न जाने दिल के कौन से ोने से उसे आवाज आई कि यह लड़का अशुभ है जिसने आते ही पने नाना को निगल लिया है—यद्यपि नम्रता का ऐसे भ्रमों पर श्वास नहीं था किन्तु वह क्या करती—यह विचार बार-बार उसके न में जन्म लेता और जितना भी वह इस विचार को दबाने का त्न करती उतना ही और प्रबल होकर यह विचार उठता।
एक रात नम्रता ने अपनी सास पर यह विचार प्रकट कर दिया —पहले तो उसकी सास ने आश्चर्य से उसे देखा फिर स्नेह से उसके र पर हाथ फेरती हुई बोली, "बेटी! तुम पढ़ी-लिखी होकर इन भ्रमों में पड़ती हो···।"
"माँ जी···मैं इस विचार को मन से बाहर निकाल फेंकना चाहती लेकिन यह विचार रह-रहकर मुझे चिन्ता में डाल रहा है।"

"पगली—ऐसी बातें नहीं सोचनी चाहिए···।"

"माँ जी—?" नम्रता ने आँसू पीने का प्रयत्न किया और अपना सिर सास की गोद में रख दिया। जाने कितनी देर तक नम्रता अपने आँसुओं से खेलती रही और उसकी सास उसका धैर्य बँधाती रही—सास ने उसे गीता पढ़कर सुनाई···जाने उनकी गोद में कितना अपनापन था कि नम्रता को ऐसे अनुभव हुआ जैसे उसके मन का बोझ उतर गया हो—

चन्द दिनों बाद आनन्द दिल्ली से लौट आया। उस रात नम्रता आनन्द के गले लगकर बड़ी देर तक रोती रही—आनन्द ने भी उसे रो लेने दिया ताकि उसके मन का बोझ हल्का हो जाए। काफ़ी रात गुज़रने के बाद आनन्द ने उसे सहारा दिया और धीरज रखने को कहा। नम्रता अपने मन के भ्रम के बारे में आनन्द से कुछ न कह सकी। थोड़े दिनों बाद नम्रता की सास भी दिल्ली हो आई—और फिर दोबारा ब्रिज नम्रता को लेने आया। नम्रता की सास और आनन्द ने उसे दिल्ली जाने की आज्ञा दे दी। चलते समय सास ने बहू को नन्हें स्वीटी का ध्यान रखने को कहा।

दिल्ली आकर नम्रता ने जब अपनी मम्मी को देखा तो वह जैसे जड़ हो गई। उसने अपने पति की मौत का इतना भारी दुःख लगा लिया था कि कुछ ही दिनों में सूख कर कांटा हो गई थी। ब्रिज और बाली दिन-रात मम्मी की सेवा करते थे लेकिन पति के असहनीय वियोग ने उन्हें जीती-जागती लाश बनाकर रख दिया था।

पहले-पहल तो नम्रता का मन नहीं लगा। हर समय मम्मी को दुःखी देखकर उसे पिताजी की याद सताती किन्तु धीरे-धीरे नम्रता तो यह सहन करने लग पड़ी थी लेकिन उसकी मम्मी तो बीस वर्ष आगे बढ़ गई थी—

ब्रिज और बाली का प्रेम देखकर नम्रता को बहुत सान्त्वना मिली थी। इसमें सन्देह नहीं कि पिता की मौत का जितना दुःख बेटी को को होता है उतना बेटे को नहीं होता—समय ने उनके घावों पर

मरहम रख दी थी। वाली 'स्वीटी' को बहुत प्यार करती थी।

दिन बीतते गए…नम्रता ने मम्मी का मन बहलाने का बहुत प्रयत्न किया और उसका परिश्रम असफल नहीं हुआ—धीरे-धीरे उसकी मम्मी ने घरेलू काम-काज में रुचि लेना आरम्भ कर दिया—स्वीटी तो सदा नानी के कन्धों पर होता—

एक दिन शाम को नम्रता अकेली अपने कमरे में बैठी हुई कालिज की पुरानी फाईल निकालकर देख रही थी कि अचानक एक तस्वीर नीचे गिर गई। नम्रता ने झुककर उठाई तो सकते में आ गई। यह तस्वीर विष्णु ने बनाई थी और नम्रता को बहुत पसन्द थी…नम्रता ने यह तस्वीर विष्णु से ले ली थी। विष्णु ने पतला ब्रश लेकर चित्र पर अपना नाम लिख दिया था। उसने नम्रता को इस चित्र का शीर्षक बताने के लिए कहा था। अतीत की कोई घटना नम्रता को याद आ रही थी…उसने आँखें बन्द करके कुछ देर तक सोचा फिर धीरे-से बोली थी, "सपनों का ताजमहल…।"—

और फिर बिना कुछ सोचे विष्णु ने हल्के लाल रंग से उस पर "सपनों का ताजमहल" लिख दिया था और नम्रता की ओर चित्र बढ़ाते हुए बोला था, "मेरी ओर से उपहार—।"

नम्रता ने सादर उसका उपहार रख लिया था—आज वही 'सपनों का ताजमहल' नीचे गिर गया था। इस ताज की दीवारों में विष्णु का चेहरा झलकने लगा था…वही उदास-सी कलात्मक मुस्कान…नम्रता ने घबराकर तस्वीर को फ़ाईल में रख दिया और फाईल बन्द कर दी। उसके माथे पर पसीने की बूँदें उभर आई थीं …नम्रता घबराहट दूर करने के लिए खिड़की के पास आ खड़ी हुई और बाहर लॉन में देखने लगी—ब्रिज और बाली बैडमिंटन खेल रहे थे और उनकी मम्मी स्वीटी को गोद में लिए लॉन में बैठी थीं। नौकर मेज़ पर चाय लगा रहा रहा था। नम्रता कुछ सोचकर अपने कमरे से बाहर आ गई। वह मस्तिष्क पर छाई विष्णु की तस्वीर से भागना चाहती थी…किन्तु एक विचार बार-बार उसे व्याकुल कर

"पगली—ऐसी बातें नहीं सोचनी चाहिए···।"

"माँ जी—?" नम्रता ने आँसू पीने का प्रयत्न किया और अपना सिर सास की गोद में रख दिया। जाने कितनी देर तक नम्रता अपने आँसुओं से खेलती रही और उसकी सास उसका धैर्य बँधाती रही—सास ने उसे गीता पढ़कर सुनाई···जाने उनकी गोद में कितना अपनापन था कि नम्रता को ऐसे अनुभव हुआ जैसे उसके मन का बोझ उतर गया हो—

चन्द दिनों बाद आनन्द दिल्ली से लौट आया। उस रात नम्रत आनन्द के गले लगकर बड़ी देर तक रोती रही—आनन्द ने भी उं रो लेने दिया ताकि उसके मन का बोझ हल्का हो जाए। काफ़ी रा गुज़रने के बाद आनन्द ने उसे सहारा दिया और धीरज रखने कहा। नम्रता अपने मन के भ्रम के बारे में आनन्द से कुछ न सकी। थोड़े दिनों बाद नम्रता की सास भी दिल्ली हो आई— फिर दोबारा ब्रिज नम्रता को लेने आया। नम्रता की सास आनन्द ने उसे दिल्ली जाने की आज्ञा दे दी। चलते समय सा बहू को नन्हें स्वीटी का ध्यान रखने को कहा।

दिल्ली आकर नम्रता ने जब अपनी मम्मी को देखा तो व जड़ हो गई। उसने अपने पति की मौत का इतना भारी दुःख लिया था कि कुछ ही दिनों में सूख कर काँटा हो गई थी। ब्रि वाली दिन-रात मम्मी की सेवा करते थे लेकिन पति के अ वियोग ने उन्हें जीती-जागती लाश बनाकर रख दिया था।

पहले-पहल तो नम्रता का मन नहीं लगा। हर समय म दुःखी देखकर उसे पिताजी की याद सताती किन्तु धीरे-धीरे तो यह सहन करने लग पड़ी थी लेकिन उसकी मम्मी तो आगे बढ़ गई थी—

ब्रिज और [illegible] प्रेम देखकर [illegible] त सान्त्व

थी। इसमें स [illegible] पिता की [illegible]। दुः

को होता है [illegible]। नहीं [illegible] उनके

प्यार में समेट लिया है···आनन्द उससे असीम प्यार करता है—उसकी मास तो उस पर वास्तव में प्राण छिड़कती है— आखिर मन में यह कैसी 'टीस' है जो अब भी उसे भटकने पर विवश कर रही है—

तभी मन के किसी कोर से आवाज आई···मानवता का एक नाता होता है जो हर इन्सान पर उसी दिन से लागू हो जाता है जब वह इस विशाल दुनिया में आता है—आखिर विष्णु के बारे में जानने में हानि क्या है···मन को सान्त्वना ही तो मिलेगी···

इन्हीं विचारों में घिरी हुई नम्रता जब कालिज पहुँची तो बाहर लॉन ही में उसे कुछ क्लास-फैलो मिल गई—

"नम्रता जी—

"हूँ—।" नम्रता ने सबको हाथ जोड़कर नमस्ते कही और उनके पास ही खड़े होकर बातें करने लगी।

बातें कालिज की चार दीवारी से आरम्भ होकर नम्रता की शादी तक पहुँच गई। नम्रता मुस्कराकर हर-एक को उचित उत्तर देती रही कि एक लड़की ने कहा, "सुधा बेचारी बड़ी भाग्यहीन रही···।"

"भाग्यहीन···?" नम्रता चौंक उठी। सुधा उसकी सबसे प्रिय सहेली थी···उसने राकेश से शादी कर ली थी।

"हाँ—राकेश का देहान्त हो गया है।"

"क्या—?" नम्रता चिल्ला-सी उठी। राकेश उसका क्लास-फैलो था···उसे राकेश से सहानुभूति थी—फिर उसकी प्रिय सहेली का पति था—राकेश शायद नम्रता से भी प्रेम करता था कभी···

"क्योंकि—!" नम्रता ने व्याकुल होकर पूछा।

"वह माँ बनने वाली है—" एक लड़की ने दबी जबान से कहा और वहाँ कब्रिस्तान जैसा मौन छा गया।

"उसके ससुराल कहाँ है?" नम्रता ने पूछा।

"रूप नगर में—अगर तुम चलना चाहो तो मैं साथ चलूँगी।" उस लड़की ने कहा।

"मैं जरा प्रोफ़ेसर श्रीवास्तव से मिल लूँ—फिर इकट्ठे चलते हैं।"

"अच्छा—!"

"मैं अभी आई—।" यह कहकर नम्रता श्रीवास्तव से मिलने के लिए दफ़्तर में चली गई।

इस समय श्रीवास्तव की कोई क्लास नहीं थी और वह दफ़्तर ही में था। नम्रता को देखकर वह अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ और मुस्कराते हुए बोला, "ओ···नम्रता···आओ···आओ···।"

"नमस्ते!" नम्रता ने हाथ जोड़कर नमस्ते कही।

"नमस्ते—बैठो—" श्रीवास्तव ने एक ख़ाली कुर्सी की ओर संकेत किया।

"नम्रता कुर्सी पर बैठ गई तो श्रीवास्तव ने पूछा, "सुनाओ—ठीक तो रही हो?···पहले से दुबली हो गई हो।"

"दुबली···! मैं तो अच्छी-खासी मोटी-ताजी हूँ—आप सुनाइए कैसे गुजर रही है?"

"बड़े मज़े में—आनन्द बाबू का क्या हाल है?"

"अच्छे हैं—मैं आपके पास विष्णु के बारे पूछने आई थी।"

"ओहो—विष्णु—वह तो तुम्हारी शादी के बाद यहाँ आया ही नहीं—हाँ पिछले वर्ष यहाँ आर्ट गैलरी में उसकी तस्वीरों की प्रदर्शनी लगी थी जो बड़ी सफल रही थी—कम-से-कम बीस हजार की सेल रही होगी।"

"सच—!" नम्रता को इस सूचना से प्रसन्नता हुई—उसकी

हार्दिक इच्छा थी कि विष्णु अपनी कला में उन्नति के शिखर पर पहुँचे। वह उसका अन्त विनसिट वान गोफ के समान नहीं देखना चाहती थी।"

"हाँ—और यह भी हुई खबर सुनी है कि उसने किसी आर्ट कालिज में सर्विस कर ली है—लेकिन यह नहीं मालूम कौन-से कालिज में—और हाँ, तुम क्या अभी स्टडी करती हो या छोड़ दी।"

"प्रोफ़ेसर साहब इतना समय ही नहीं मिलता।"

"समय तो निकल सकता है लेकिन उसके लिए लगन होनी चाहिए—जब तुम यहाँ स्टूडैण्ट थीं तब तो बड़ी लगन से काम करती थीं—अब क्या हो गया है ? शायद घरेलू कामों में व्यस्त रहती हो—।"

"ऐसा ही समझ लीजिए—।" नम्रता श्रीवास्तव की बात समझ गई थी इसलिए उसने हाँ में उत्तर दिया।

"ओ—मैं तो भूल ही गया—चाय पियोगी···या कोल्ड ?"

"जी कुछ भी नहीं।"

"यह तो नहीं हो सकता।"

"फिर चाय ठीक रहेगी।"

श्रीवास्तव ने चपरासी को चाय लाने के लिए कहा और नम्रता से बोला, "जब तक चाय आए मैं तुम्हें इस साल का काम दिखाता हूँ।" श्रीवास्तव ने चपरासी को बुलाकर एक बड़ा फ़ाइल मँगवाया और नम्रता को विद्यार्थियों का काम दिखलाने लगा।

इतने में चाय आ गई। नम्रता ने चाय बनाई और फिर चाय पीने के बाद बोली, "अच्छा अब आज्ञा चाहती हूँ।"

"अच्छी बात है—लेकिन मेरी एक बात का ध्यान रखना—समय निकालकर कुछ-न-कुछ इस कला के लिए करते रहना।" श्रीवास्तव ने नसीहत दी।

नम्रता नमस्ते कहकर बाहर लॉन में आ गई जहाँ पर वह अपनी एक क्लास-फ़ैलो को प्रतीक्षा करने के लिए कह आई थी।

दोनों जब सुधा के यहाँ पहुँची तो पता चला कि सुधा

गई हुई है। नम्रता ने अपना नाम और पता उसके ससुराल वालों को बताया और कहा कि सुधा से कहें कि वह आज ही उसके यहाँ आए। बहुत विवश करने पर दोनों ने वहाँ चाय पी और वापस लौट आईं।

नम्रता अपने कमरे में बैठी अपनी सहेली के बारे बारे में सोच रही थी··· बेचारी सुधा जीवन की यात्रा में अकेली रह गई थी—कितने दुर्भाग्य की बात थी···। तभी एक नौकर कमरे में आया और एक चिट्ठी उसकी ओर बढ़ाते हुए बोला, "बीबी जी—आपकी चिट्ठी—।"

नम्रता ने चिट्ठी ली और नौकर को एक गिलास पानी लाने के लिए कहकर उत्सुकता से चिट्ठी खोलने लगी।

चिट्ठी आनन्द की थी—उसने उसे जल्दी लौट आने के लिए कहा था···उसने यह भी लिखा था कि उसकी बदली कहीं और हो रही थी—कहाँ—यह उसने नहीं लिखा था।

नम्रता ने चिट्ठी पढ़कर एक ओर रखी ही थी कि नौकर पानी का गिलास लेकर आ गया। नौकर ने यह भी सूचना दी कि सुधा उससे मिलने के लिए आई है।

नम्रता अपने कमरे से बाहर निकल आई—दूसरे ही क्षण वह सुधा के गले से लगकर रो रही थी।

सभी लोग बाहर लॉन में बैठे शाम की चाय पी रहे थे···नम्रता और सुधा कमरे में बैठी एक-दूसरे से दिल की बातें कर रही थीं—सुधा जो बहार का खिला फूल थी इन चन्द महीनों ही में मुर्झा गई थी।

नम्रता ने उससे पूछा, "फिर क्या सोचा है?"

"सोचा—" सुधा ने एक ठण्डी आह भरी और धीरे-से बोली, "नम्रता! यह पहाड़ जैसा जीवन कैसे गुजरेगा—कुछ समझ में नहीं आता।"

"सुधा! एक बात कहूँ।"

"कहो—।"

"तुम दूसरी शादी कर लो—!"

"नम्रता···!" सुधा की आँखें भर आईं।

"हाँ—इसके अतिरिक्त कोई और उपाय नहीं—जवानी में विधवा होना औरत के लिए बहुत बुरा है—सभी लोगों की नजरें उस पर उठी रहती हैं—हर-एक आँख में वह खटकती है—लोग तरह-तरह की बातें करते हैं · पुरुष तो बिना दूसरी शादी के रह सकता है—लेकिन नारी को समाज ने अभी तक यह अधिकार नहीं दिया जब वह अकेली रहकर इस समाज का सामना करें···।"

"नम्रता···! यह मुझसे नहीं होगा—मेरे पेट में राकेश की निशानी है मैं राकेश के प्रेम को नहीं भूल सकती।"

"सुधा! मैं तेरे भले की कहती हूँ—आखिर जीवन के दिन किस आधार पर बिताओगी—तेरे ससुराल वाले अभी चुप हैं—इसके बाद तुम उन पर भी बोझ बन जाओगी—रही मायके की बात वहाँ केवल तुम्हारे चाचा हैं और कोई नहीं। लड़की जब ब्याही जाती है तो वह मायके वालों के लिए भार बन जाती है—मैं तुम्हारी दुश्मन तो नहीं हूँ—आखिर तुम जीवन के दिन कैसे काटोगी?"

"मैं कहीं नौकरी कर लूँगी।" सुधा ने साहस से कहा।

"नौकरी—तुम अवश्य कर लोगी लेकिन दुनिया की उठती हुई उँगलियाँ—किसी से हँसकर बात करना—जीवन-भर विधवापन के आँसू बहाना—क्या तुम इन सब आने वाली आपत्तियों का अकेले मुकाबिला कर लोगी?"

"जब भगवान् दुःख देता है नम्रता, तो उसे सहने की शक्ति भी देता है—लेकिन मैं राकेश के अमर प्रेम को नहीं भूल सकती" सुधा की आँखों में आँसू मचल उठे थे—

नम्रता भी सहेली की आँखों में आँसू देखकर अपने आँसू न रोक सकी—और फिर आगे बढ़कर उसे सान्त्वना देने लगी, "··· तुम्हें इतनी शक्ति दे कि तुम दुनिया का मुकाबि···

"क्या—?"

"आजकल आप कुछ चिन्तित से रहते हैं।"

"नहीं तो—" आनन्द ने टालना चाहा।

"अगर आप नहीं बतलाना चाहते तो आपकी इच्छा...लेकिन मैं कई दिनों से देख रही हूं आप प्रायः चिन्तित से रहते हैं—।"

"हूं—।" आनन्द ने कोई उत्तर नहीं दिया।

नम्रता ने उसे झंझोड़ा और कहा, "क्या सोचने लगे ?"

"कुछ नहीं—सोच रहा था...।"

"कुछ नहीं और सोच रहे हैं—किन्तु क्या ?"

"शायद मेरी बदली फिर किसी और स्थान पर हो जाए।"

"वह तो होती रहती है, इसमें सोचने की क्या बात है ?"

"नम्रता ! इस बार मैं आप लोगों को साथ न ले जा सकूंगा।"

"जी—" नम्रता ने आश्चर्य से आनन्द की ओर देखा।"

"हाँ—इस बार मेरी पोस्टिंग फ़ील्ड में कहीं होगी...।"

"कहाँ—?"

"यह तो मैं स्वयं भी नहीं जानता—अगर जानता भी होता तो भी शायद बतला न सकता।"

"हूं—।" जिस बात पर आनन्द चिन्तित था उसी बात पर नम्रता भी चिन्तित-सी हो गई।

"इसलिए नम्रता, मैं चाहता हूं एक और सही।"

लेकिन अब के नम्रता आनन्द की शोखी का उत्तर न दे सकी—वह अब जान गई थी कि आनन्द अपनी व्याकुलता दूर करने के लिए ऐसी बातें करता है—

"फिर हम लोग कहाँ रहेंगे ?"

"चण्डीगढ़—मैं तुम लोगों से दूर तो जरूर हूंगा—लेकिन तुम जब भी याद करोगी तुम्हारे दिल में से निकलकर तुम्हारे सामने आ जाया करूंगा।" आनन्द प्रयत्न कर रहा था कि वातावरण उदास न हो इसीलिए वह ऐसी बातें कर रहा था—वैसे वह स्वयं सोच रहा था कि

; नम्रता और स्वीटी से कैसे दूर रह सकेगा—उस नम्रता के लिए
उसे बड़े जतन से जीता था। उसे अब भी अपनी सुहाग की रात
र विष्णु की चिट्ठी याद थी—लेकिन उसने आज तक नम्रता पर
ह स्पष्ट न होने दिया था कि वह उसके अतीत के बारे—उसके प्यार
: बारे जानता है—नम्रता चुप हो गई थी। आनन्द ने उसे कन्धे से
कड़ा और उसका मुँह अपनी ओर करके बोला, "तुम्हारी आँखों में
आँसू !"

"आनन्द···!" नम्रता आनन्द के साथ लिपट गई।

"अरी पगली !" इसमें रोने की क्या बात है—अपनी ऐसी कौन-सी बदली हो गई है।

आनन्द नम्रता को सहारा देकर बाहर आया।

दिन हवा के पंख लगाकर उड़ गए···प्यार और खुशियों के दिन शीघ्र बीत जाते हैं—और फिर एक दिन वह घड़ी भी आ पहुँची जब आनन्द ने नम्रता को आकर सूचना दी कि उसकी बदली हो गई है—इस सूचना पर नम्रता अर्ध अचेत-सी हो गई···लेकिन अब उसमें कुछ सहन-शक्ति आ गई थी···इसलिए वह शीघ्र ही संभल गई। नम्रता को पड़ोस के लोगों से भी मालूम हुआ था कि छावनी में बहुत-से लोगों की भी बदलियाँ हो गई थीं—कई लोगों के आर्डर आ चुके थे।

इन दिनों छावनी में काफी हलचल थी···कोई यहाँ से जाकर किसी अनजान स्थान पर जा रहा था और कोई किसी अज्ञात स्थान से यहाँ पर आ रहा था।

आनन्द ने अभी तक अपनी माँ को यह सूचना न दी थी और जब नम्रता माँ जी को बताने के लिए जाने लगी थी आनन्द ने उसकी साड़ी का पल्लू पकड़ लिया और बोला, "नम्रता ! तुम माँ जी को अभी कुछ न कहना...।"

"क्यों···?"

"माँ जी कई प्रश्न पूछने लगेंगी—और शायद मैं उत्तर न दे

पाऊँ।"

"मैं समझी नहीं।"

"अभी स्वीटी छोटा है—जब बड़ा होकर तुमसे कोई बात कहेगा उस समय तुम क्या उत्तर दोगी और क्या पूछोगी—तब पता चलेगा।"

"लेकिन माँ जी को बतलाना तो पड़ेगा।"

"नहीं—मैं तुम लोगों को चण्डीगढ़ भेज दूंगा और कहूँगा कि मैं बाहर कहीं दूसरे स्थान पर ट्रेनिंग पर जा रहा हूँ—और फिर वहीं से पत्र लिख दूंगा कि मेरी बदली के आर्डर हो गए हैं।"

"आखिर उस दिन तो माँ जी को पता चलेगा ही।" नम्रता ने कहा।

"लेकिन इस समय तो मैं उनके प्रश्नों की बौछार से बच जाऊँगा।" आनन्द ने नम्रता को अपने पास बिठाते हुए कहा।

"लेकिन बदली तो होती ही रहती है—।"

"कहाँ होती है—यह मैं हमेशा माँ जी को बतला दिया करता था—और इस बार कहाँ हुई है···यह मैं न बता सकूंगा।" आनन्द ने यह कहकर नौकर को खाना लगाने के लिए कहा।

नम्रता उलझन में पड़ गई। उसे आनन्द की बातें समझ में न आई थीं—आखिर इस बदली में कौन-सी विशेष बात है।

खाना मेज़ पर लगाकर नौकर सूचना देने आया तो उसके साथ ही माँ जी और स्वीटी भी आ गए। माँ जी खाना खा चुकी थीं केवल स्वीटी डैडी से मिलने के लिए जाग रहा था—आनन्द ने माँ जी से स्वीटी को लेकर प्यार किया और फिर खाने की मेज़ के गिर्द बैठता हुआ बोला।—

"माँ जी—!"

"क्या बात है बेटा ?" माँ जी ने प्यार से पूछा।

"एक बात है—।"

"तेरी तब्दीली हो गई है ?"

"जी—आपको कैसे पता चला ?"

"इसमें पता चलने की क्या बात है—सुनील की माँ कह रही थी कि सुनील की भी तब्दीली हो गई है···और भी बहुत-से लोगों की तब्दीलियाँ हो रही हैं—लेकिन बेटा, क्या कहीं लड़ाई छिड़ने का खतरा है ?"

"लड़ाई—!" नम्रता ने इस शब्द को दोहराया और फिर आनन्द के मौन के महत्व को भी जान सकी। वह मन में सोचने लगी आनन्द ने आज तक उसे नहीं बताया कि कहीं लड़ाई छिड़नेका खतरा है—लेकिन माँ जी को सब पता है—पर क्यों···? वह क्यों का उत्तर जानना चाहती थी।

आनन्द ने माँ की बात का उत्तर दिया, "लड़ाई के तो कोई लक्षण नहीं माँ जी—लेकिन अगर लड़ाई छिड़ भी गई तो क्या हुआ ?"

"क्या हुआ···?" नम्रता के हाथ से चम्मच नीचे गिर गया—उसने ध्यानपूर्वक आनन्द की ओर देखा जो माँ जी से उलझा हुआ था।

"लेकिन लड़ाई पर मैं तुझे न जाने दूंगी—।" माँ जी ने दिल की बात कह दी।

"माँ ! तू एक सिपाही की माँ है—और फिर माँ यह लड़ाई हम किसी और के लिए तो नहीं लड़ेंगे···अपने देश के लिए लड़ना तो हमारा धर्म है—क्या अपने देश की रक्षा करना हम सब का कर्त्तव्य नहीं ?"

"लेकिन बेटा···।"

"देखो—एक बात का उत्तर दो—" और फिर आनन्द ने नम्रता की ओर देखकर कहा, "नम्मो ! तुमने खाना क्यों छोड़ दिया ?"

"जी—।" नम्रता ने हाथ बढ़ाकर चपाती उठा ली।

आनन्द बोला, "माँ ! हमारे मकान में कोई घुस आए या हमारे मकान पर कोई आक्रमण कर दे तो क्या हमें मकान की, सम्पत्ति की और घर के वासियों की रक्षा नहीं करनी चाहिए ?"

"करनी चाहिए—।" माँ जी के मुँह से अनायास निकल गया।

"बस माँ जी !" आनन्द मुस्कराकर बोला, "आपने मेरे प्रश्न का उत्तर दे दिया—आपके प्रश्न का उत्तर भी इसी में छुपा है—मकान हमारे परिवार का है और देश हम सब लोगों का एक ही बड़ा मकान है।"

"तू बहुत अधिक चतुर है—बातों-बातों में माँ को इधर-उधर टाल दिया—लेकिन बेटा···नम्रता और स्वीटी···।"

"माँ जी, फिर वही बात—।" आनन्द ने खाने की खाली प्लेट एक ओर सरकाते हुए माँ की ओर देखा जिनकी गोद में स्वीटी सो गया था।

"आखिर हमारे देश पर कौन आक्रमण कर रहा है—मैंने तो ऐसी कोई बात नहीं सुनी—हाँ सुनील की माँ कह रही थी कि—"

"माँ जी ! सुनील की माँ की बात जाने दो—वह तो रोज अखबार पढ़ती है" आनन्द ने मुस्कराकर कहा और फिर थोड़ी देर के बाद बोला, "माँ जी ! मैंने चण्डीगढ़ में तार दे दिया है कि हमारा मकान जल्दी खाली कर दिया जाए—और मेरे विचार में आप लोग दस तारीख को चण्डीगढ़ के लिए रवाना हो जाएँ—"

"मगर बेटा ! मेरा दिल···!" ममता की मारी माँ ने फिर कुछ कहना चाहा।

आनन्द झट अपनी कुर्सी से उठकर माँ जी की कुर्सी के पास आ गया—और अपने दोनों हाथ माँ जी की गर्दन में डालते हुए प्यार से बोला, "माँ जी नम्रता है—स्वीटी है—आप ही तो कहा करती हैं कि आनन्द बेटा ! जब तू दफ़्तर जाता है तो स्वीटी से मैं बातें करती हुई अनुभव करती हूँ जैसे आनन्द से बातें कर रहीं हूँ।"

फिर आनन्द माँ जी को सहारा देकर उन्हें उनके कमरे में लाया। नम्रता ने स्वीटी के कपड़े बदले और फिर आनन्द और नम्रता ने मिलकर माँ जी की टाँगें दबाईं। जब माँ जी सो गईं तो दोनों उठकर अपने कमरे में आ गए।



प्रोग्राम अनुसार माँ जी, नम्रता और स्वीटी चण्डीगढ़ के लिए रवाना हो गए और आनन्द अपने नये ड्यूटी स्टेशन के लिए—

चण्डीगढ़ में इन लोगों का मकान खाली हो चुका था। दो-तीन दिन लगकर काम करके नम्रता ने मकान का नक्शा ही बदल दिया। सुन्दर ड्राइंग-रूम में उसने अपनी पेंटिंग्ज़ लगाईं जो उसने स्वयं शादी के बाद बनाई थीं—कानिस पर यूनीफ़ार्म में आनन्द की तस्वीर थी—और उसके ऊपर उन दोनों का फ़ोटो था जो उन्होंने शादी के दूसरे ही दिन खिंचवाया था—ड्राइंग-रूम में सबसे आकर्षित चीज़ स्वीटी और माँ जी की इकट्ठी बड़ी तस्वीर थी जिसमें स्वीटी ने दाँत निकाल रखे थे। यह तस्वीर प्रवेश-द्वार के बिलकुल सामने दीवार पर टंगी थी।

इन कामों से निपटकर नम्रता ने एक दिन पड़ोस वालों को अपने यहाँ चाय पर आमन्त्रित किया ताकि उन लोगों से जान-पहचान हो सके। अब उन्हें अधिक समय इन्हीं लोगों के संग रहना था और आपस का दुःख-सुख बांटना था। नम्रता जब से यहाँ आई थी वह एक क्षण के लिए भी मकान से बाहर न निकली थी। जब नम्रता की सास पड़ोस वालों को निमन्त्रण देकर लौटी तो उसने नम्रता को अपने पास बुलाया और कहा, "यह मुहल्ला भी विचित्र है—।"

"क्यों? क्या हुआ माँ जी!" नम्रता ने स्वीटी को कंघी करते हुए पूछा।

"वह सामने वाले मकान में एक औरत रहती है—उसने अपने पति की मौत के बाद अपने देवर से शादी कर ली है—क्या यह शादी करना बुरा है?"

"नहीं—।" नम्रता के मुँह से अनायास निकल गया।

"मैं भी कहती हूँ—जवानी में बेचारी विधवा हुई है···अगर ज़िन्दा रहने के लिए उसने शादी कर ली है तो इसमें बुराई क्या है?"

"लेकिन हुआ क्या है ?" नम्रता ने कंघी एक ओर रख दी।

"सब मुहल्ले वालों ने उसका बाईकाट कर रखा है—।"

"क्यों···?" नम्रता ने आश्चर्य से पूछा।

"यही तो मैं पूछती हूँ बेटी—यह औरतें उससे घृणा क्यों करती हैं ? उसकी एक लड़की है···बहुत प्यारी—उसके पास जब मैं गई तो सच कहती हूँ नम्रता ! उसकी आँखों में आँसू देखकर मैं अपने आँसू न रोक सकी। शायद मैं मुहल्ले की पहली औरत हूँ जो उसके यहां गई है—और जब उसने मुझे अपनी कहानी सुनाई तो—" कहते-कहते माँ जी की आँखों में आँसू निकल आए उन्होंने दोपट्टे से आँसुओं को पोंछा और क्षण-भर रुककर बोली, "वह तो हमारे यहाँ आती ही नहीं, कहती थी कि कहीं मेरे कारण सारा मुहल्ला आप लोगों का भी बाईकाट न कर दे।—मैंने कहा—सारा मुहल्ला वैरी बन सकता है लेकिन मेरी बेटी नम्रता तुम्हारी सहेली बन जायेगी—क्यों बेटी ठीक कहा ना।"

"माँ जी—।" नम्रता अपनी सास के गले से लिपट गई। उसका मन अनायास भर आया था।

"क्या नाम है माँ जी उसका···?"

"शायद सुधा बतलाया था।"

"सुधा—।" नम्रता यों चौंककर सास के गले से लिपटी जैसे बिच्छू ने काट खाया हो।

"क्या बात है ?"

"सुधा मेरी एक सहेली है—दिल्ली में रहती थी—उसके पति का देहान्त हो गया था।"

"शायद फिर वही हो—" माँ जी ने उत्तर दिया।

"मैं उससे मिलकर आती हूँ—।"

"हूँ—" माँ जी ने कोई उत्तर न दिया और आगे बढ़कर स्वीटी को थाम लिया जिसका अर्थ था कि उसे आज्ञा है।

नम्रता भागती हुई सुधा के यहाँ पहुँच गई—सुधा वास्तव में

उसकी सहेली थी—दोनों एक-दूसरे से गले मिलकर इतनी देर तक रोईं कि उन्हें भान भी न हुआ कि कितना समय बीत गया है—फिर जब सुधा की छोटी बच्ची ने रोना आरम्भ कर दिया तो वह एक-दूसरे के गले से हटी—फिर इधर-उधर की बातें होने लगीं। सुधा ने सारी कहानी कह सुनाई कि वह शादी तो नहीं करना चाहती थी—घर वाले भी दूसरी शादी के विरुद्ध थे लेकिन ससुराल वालों के ताने वह सहन न कर सकती थी—हर समय नौकरानी के समान वह घर का काम करती लेकिन फिर भी सुख की साँस न ले सकती—और यह बात उसके देवर से देखी नहीं जाती•••वह प्रायः अपनी माँ से उसके पीछे झगड़ पड़ता। फिर एक दिन माँ ने गुस्से में अपने छोटे लड़के को ताना दिया अगर भाभी का इतना ही ध्यान है तो शादी कर ले। —बस उस दिन से उसके दिमाग़ में क्या धुन सवार हुई कि उसने मन में धारणा कर ली कि वह यह शादी करके ही रहेगा। पहले-पहल तो मैं न मानी लेकिन घर वालों के व्यवहार से तंग आकर मैंने देवर के साथ 'चादर' डाल ली।"

सुधा खुश थी कि सारे मुहल्ले की तरह नम्रता और उसकी सास ने उससे घृणा नहीं की—नम्रता अपने स्थान पर खुश थी कि उसकी पुरानी सहेली मिल गई है—अब उसका समय चैन से कटेगा।

उस दिन सारे मुहल्ले की औरतें और बच्चे नम्रता के यहाँ आमन्त्रित थे। सबसे जान-पहचान होने के बाद नम्रता ने सुधा की वकालत की—कुछ औरतों पर इसका प्रभाव हुआ। नम्रता और सुधा के मेल ने सारे मुहल्ले को सुधा के भी निकट कर दिया। जो औरतें सुधा से घृणा करती थीं नम्रता ने बड़े प्यार से उन्हें सुधा की दास्तान सुनाई और धीरे-धीरे घृणा छटने लगी और प्यार उसका स्थान लेने लगा। सुधा का घर वाला 'राजेश' वकील था। बड़ा मिलनसार, उदार हृदय और हँसमुख व्यक्ति था—वह सदा सुधा को खुश रखता था और अपने भाई की बच्ची नीनू से बहुत प्यार करता था—और अब सुधा के यहाँ एक नया मेहमान आने वाला था—सुधा भी अब राकेश

के प्रेम को भूलकर राजेश के प्यार में खो गई है—उसके स्वास्थ्य का हर समय ध्यान रखती। देखा जाए तो प्रकृति जीवन के बड़ी अनुकूल है···सृजन और उत्पत्ति का नियम बड़ा सरल है···अनुकूल वातावरण मिलने पर कहीं से काटी शाख पैवन्द के समान दूसरे स्थान पर लग जाती है और फलने-फूलने लगती है।

□

नम्रता को हर दूसरे दिन आनन्द का पत्र आ जाता था और नम्रता उसी समय उत्तर दे देती। जब भी उसकी चिट्ठी आती नम्रता उसे तीन-तीन बार पढ़ती और घंटों चिन्तित रहती—और फिर एक दिन आनन्द का पत्र आया कि उसकी बदली किसी दूसरे स्थान पर हो गई है—अब उसका पत्र हर दूसरे दिन के स्थान पर सात-सात आठ-आठ दिनों बाद आने लगा और वह भी बहुत संक्षिप्त—ए पत्र में आनन्द ने लिखा कि अगर उसे चिट्ठी लिखने में देर हो जाय करे तो घबराए नहीं क्योंकि हो सकता है अब उसे चिट्ठी लिखने क समय न मिल सके क्योंकि आज कल वह बहुत अधिक व्यस्त है— फिर चिट्ठियों का समय बढ़कर बीस दिन पर जा पहुंचा—और फि अखबारों में यह खबरें आने लगीं कि चीन हमारी उत्तर-पूर्वी सी पर छुट-पुट हमले कर रहा है।

दिन बीतते गये। नम्रता हर समय आनन्द की याद में सी रहने लगी। नम्रता का यह चुपचुप रहना माँ जी से न छुप सका—वह भी अपने बेटे के लिए हर समय उदास और व्य रहतीं।"

इधर नम्रता की सहेली सुधा के यहाँ उसकी बेटी नीलू का दिन था। वर्षगाँठ के इस शुभ अवसर पर सुधा ने एक बड़ी शानदार पार्टी का प्रबन्ध किया—नम्रता को उसने विशेष रूप से न्त्रित किया था—किन्तु नम्रता उसके यहाँ न जा सकी···

जाने क्यों—?

दीवाली निकट आ रही थी—किन्तु सब लोगों के मन मुर्झाए हुए थे—सारा हिन्दोस्तान 'दोस्ती की आग में जल रहा था' क्योंकि वो ही पत्ते हवा देने लगे थे जिन पर भरोसा था। चीन ने दोस्ती की आड़ लेकर हिन्दोस्तान की पीठ में छुरा भोंक दिया था। लद्दाख और नेफा पर आक्रमण करके उसने बड़ी नीचता का प्रदर्शन किया था। बीस अक्तूबर उन्नीस सौ बासठ का दिन भारत के इतिहास में हमेशा याद रहेगा कि इस दिन एक मित्र बने हुए देश ने दूसरे पड़ोसी मित्र से निर्लज्जतापूर्ण व्यवहार किया।

देश में बड़ा उदास वातावरण था…जिन माओं के बेटे…जिन बहनों के भाई और जिन पत्नियों के पति लाम पर गए थे उनके घरों में दीवाली की जगमग तो एक ओर दीया तक न जला था।

नम्रता की सास तो हर समय भगवान् की मूर्ति के सामने बैठी प्रार्थना करती रहती और नम्रता अपने कमरे में बन्द आनन्द की तस्वीर की ओर देखती रहती…उसकी आँखों से आँसुओं की गंगा बहती रहती।

कई दिन से आनन्द का पत्र नहीं आया था—जब भी डाक का समय होता नम्रता खिड़की में खड़ी होकर नीचे झाँकती—लेकिन डाकिया शायद इधर का रास्ता ही भूल गया था।

सुधा प्रायः नम्रता का मन बहलाने उसके पास चली आती और कुछ देर तक बैठी उसका मन शान्त करने का प्रयत्न करती—जब वह देखती कि नम्रता पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता तो वह स्वीटी को उठाकर उसकी गोद में डाल देती और स्वीटी को गुदगुदा-सा देती। स्वीटी की हँसी देखकर नम्रता की आँखों में आँसू निकल आते और फिर थोड़ी देर के बाद नम्रता अपना दुःख भूल जाती—

आज सुबह से नम्रता का दिल जाने किस डर से डूबा जा रहा था—क्योंकि रात को उसने रेडियो पर प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू

का भाषण सुना था। सुबह जब माँ जी ने उसे चाय पीने के लिए कहा तो उसने तबीयत खराब होने का बहाना कर दिया और अपने कमरे में जाकर उसने कमरा बन्द कर लिया। माँ जी को एक तो अपने जवान बेटे का दुःख और चिन्ता लगी थी दूसरी ओर जब उन्हें नम्रता की चिन्ता ने आकर घेरा था—नम्रता का स्वास्थ्य दिन-ब-दिन गिरता जा रहा था।

माँ जी ने सुधा को बुला भेजा—सुधा ने नम्रता को बहुत धीरज बँधाई लेकिन जाने आज क्या बात थी कि नम्रता का मन बस में न आ रहा था। सुधा जितना उसे सान्त्वना देती उतना ही नम्रता फूट-फूटकर रो पड़ती—बाहर माँ जी स्वीटी को डाँट रही थी कि वह अभी से बहुत शरारती हो गया है और दादी को बहुत तंग करता है उनके कपड़ों पर सूँ-सूँ कर देता है—स्वीटी दादी का पोपला मुँह देखकर मुस्करा उठा तो माँ जी ने अपना ममता से भरा चेहरा स्वीटी के पेट पर रखकर गुदगुदाना आरम्भ कर दिया···स्वीटी खिलखिला-कर हँस पड़ा।

सुधा ने नम्रता का ध्यान बाहर की ओर आकृष्ट कराना चाहा जहाँ दादी-पोते को खिला रही थी और कह रही थी, "बिलकुल आनन्द पर गया है—वही नक्श···वैसे ही होंठ···वैसी ही नीली आँखें—और बात-बात पर मुस्कराना···और हर समय शरारत···तू तो उसका भी बाप निकला—।"

माँ जी की आँखें आज से कई वर्ष पीछे की ओर देख रही थीं—वह इस समय आनन्द और नम्रता की चिन्ता भूल गई थीं—इस समय वह और स्वीटी एक-दूसरे के साथी प्रतीत हो रहे थे—आयु के दो सिरों पर होने पर भी उनमें कितनी समानता होती है—

नम्रता भी दादी और पोते को देखकर क्षण-भर के लिए सब कुछ भूल गई—अपने मन की पीड़ा भूल गई—तभी सुधा ने उसकी चुटकी ली और बोली, "तेरी सास तो देवी है—काश ऐसी सास हमारी भी होती।"

"तेरी सास को क्या हुआ है—?" नम्रता ने सुधा से कहा।

इससे पहले कि सुधा कुछ उत्तर देती किसी ने द्वार खटखटाया। जी ने नहीं सुना···वह पोते के साथ खेल में मग्न थीं। नम्रता ने ़ से माँ जी को पुकार कर कहा, "माँ जी! कोई किवाड़ खटखटा ा है।" साथ ही नम्रता ने खिड़की में से झाँककर देखा—बाहर ़़क पर मिलिट्री की जीप खड़ी थी···और एक मिलिट्री अफसर द्वार ़ दस्तक दे रहा था। जीप देखकर नम्रता का दिल किसी अज्ञात ़ से काँप उठा। तभी माँ जी ने द्वार खोल दिया। नम्रता के पास ़ड़की के निकट सुधा भी पहुँच गई थी।

"मेजर आनन्द का यही मकान है?" आने वाले अफसर ने ़री आवाज में पूछा।

"हाँ—!" माँ जी ने उत्तर दिया तो उस अफसर ने अटेंन्शन ़कर माँ जी को सैल्यूट किया और वापस जीप की ओर पलट गया।

नम्रता और सुधा खिड़की में से झाँक रही थीं। उन्हें कुछ समझ ़ी आया था कि क्या बात है कि फिर जीप में से दूसरा अफसर ... । और उसने भी अटेंन्शन होकर सैल्यूट किया।

माँ जी पहले तो कुछ न समझीं—फिर कुछ सोचकर बोलीं, "क्या ़ाप लोग मेरे बेटे आनन्द के दोस्त हैं?—वह कैसा है? अन्दर ़ाओ।" माँ ने द्वार में रास्ता छोड़ते हुए कहा।

"माँ जी मैं सरकार की ओर से आपको यह सूचना देने आया ़ कि आपका बेटा और हमारा भाई भारत माँ की लाज बचाते ़ए वीरगति पा गया है।"

"वीरगति···!" माँ जी की आँखें एकाएक पथरा-सी गईं।

उस बड़े अफसर ने आगे बढ़कर माँ जी को थाम लिया वरना ़ाँ जी नीचे गिर गई होतीं। माँ जी ने अपने सफेद बाल नोच लिए —और एक भयानक दिल में उतर जाने वाली चीख मारी। नम्रता ़ौर सुधा भागती हुई बाहर माँ जी की ओर लपकीं—उस अफ़सर ने ़ाँ जी को बाँहों में थाम रखा था—माँ जी ने जब अपने सामने नम्रता

को देखा तो बाँहें फैला दीं—और अफ़सर की बाँहों से निकल आ

"माँ जी—!" नम्रता ने कहा और माँ जी की गोद में गई।

"क्या बात है ?" सुधा ने उस मिलिट्री अफ़सर से पूछा।

अफ़सर के उत्तर देने से पहले ही माँ जी ने डर से फैली हुई अ से नम्रता की भोली जवानी को देखा और बोलीं, "तू लुट गई न बेटी !—तेरा सुहाग—मेरा आनन्द—।"

क्षण-भर के लिए नम्रता को ऐसे अनुभव हुआ जैसे वह कोई नक सपना देख रही हो—किन्तु अन्दर अकेला स्वीटी रो रहा था, आवाज़ सुनकर नम्रता को एक बार फिर विश्वास आ गया कि भयानक सपना नहीं बल्कि अति दुःखदायक वास्तविकता है… —सत्य—उसका सुहाग वीरगति को प्राप्त हुआ—अर्थात् व में मारा गया—आनन्द—उसका पति…उसका सब-कुछ—मा है—उसी क्षण उसने अपनी आँखें बड़े अफ़सर पर केन्द्रित जैसे पूछ रही हो—क्या यह सच है—अगर सच है तो भी नहीं झूठ है—लेकिन दोनों अफ़सरों ने अपनी गर्दनें झुक थीं…।

नम्रता का मौन गहरा और गम्भीर होता जा रहा था ने आगे बढ़कर नम्रता के कन्धे को झंझोड़ा और फिर दूसरे नम्रता ने सास की वीरान आँखों में देखा और स्वयं एक शाखा की भाँति माँ जी की बाँहों में गिर गई।

सारा मुहल्ला इकट्ठा हो गया—

क्योंकि एक बूढ़ी माँ का बेटा शहीद हो गया था—ए औरत का सुहाग उजड़ गया था—एक अबोध बालक अनाथ था—आनन्द भारत माता की लाज की रक्षा करते हुए श शत्रु से लड़ते हुए वीरगति पा गया था—अमर हो गया थ

सब लोगों के सिर ऊँचे थे किन्तु मन उदास थे—मु लड़कों ने मन में निश्चय किया कि वह भी आनन्द की

रानी होकर रण में उतरने और लड़ने मरने के लिए [illegible]—और बहादुरों के लिए सब का बलिदान कहूँ—यह देश है—[illegible] के पूत इतने साहसी और निडर हैं [illegible] हो सकता—एक बूढ़ी औरत ने [illegible] प्रता का सिन्दूर पोंछ [illegible]—और एक दूसरी औरत ने [illegible] परिस्थिति का भान दिलाने के लिए [illegible] पर मारकर तोड़ दीं।

सुधा स्वीटी को चुप कराने के लिए बाहर ले गई थी—[illegible] ने एक बार फिर अपनी बहू की ओर देखा जो अभी [illegible] थी और जिसकी माँग उजाड़ दी गई थी [illegible] कर दी गई थीं—उनके मुँह से एक [illegible] और वह नम्रता से लिपट गईं—

इस कमरे में बहुत-सी औरतों के इकट्ठा होने के [illegible] मिलिट्री के दोनों अफ़सर दूसरे कमरे में आ गए जहाँ [illegible] एकत्र थे—सब लोगों की नज़रें उन अफ़सरों पर जम गईं। सुधा के पति ने आगे बढ़कर उन्हें बैठने के लिए कहा—वह बैठे नहीं बल्कि उनमें से एक अफ़सर ने कहा, "आप डाक्टर को बुलाइए—मिसेज़ आनन्द अभी बेहोश हैं—।"

"ओह! मैं अभी फ़ोन करता हूँ।" सुधा के पति ने [illegible] और साथ ही दोनों अफसरों को बाहर ले गया ताकि [illegible] सके।

□

कई काली-कलूटी रातें आईं और गुजर गईं…।

आनन्द के घर तो क्या सारे मुहल्ले में अँधेरा रहा क्योंकि एक हँसते-गाते घर में आनन्द एक मौन, न समाप्त होने वाली कहानी बनकर रह गया था—

नम्रता की आँखों से सदा गंगा-जमुना बहती रहती और बूढ़ी माँ जी जो इन दिनों मृत्यु के निकट पहुँच गई थीं उनकी आँखों में

मोतियाबिन्द उतर आया···कमर झुक गई। अब उन्हें सहारे की आवश्यकता थी किन्तु भगवान् ने वह लाठी तोड़ डाली···उसके खेल न्यारे हैं—इस सुन्दर घर की आत्मा उड़ गई···यह बगिया उजड़कर सूख गई···

माँ जी हर समय उस कमरे में पड़ी रहतीं जहाँ भगवान् की मूर्ति थी···शायद उनकी मौन दृष्टि उस विष्णु से पूछती रहती कि उनसे एकाएक कौन-सा अपराध हो गया कि उसने 'महेश' का रूप धारण कर लिया···सृजन की कोमलता से यह विनाश की ताड़ना किसलिए? —उधर नम्रता अपने कमरे में गुमसुम बैठी आनन्द की तस्वीर सामने रखे रोती रहती। इस घटना ने उसे अर्धपागल-सा बना दिया था—और जब कभी नम्रता भगवान् की मूर्ति वाले कमरे के सामने से गुज-रती और माँ जी को भगवान् की मूर्ति के आगे माथा टेके देखती तो उनके पास चली आती। उसका दिल रो उठता। वह अपनी सास को संभालती और उसे सहारा देकर उठाती—दोनों एक-दूसरे को देखतीं ···एक-दूसरे की पीड़ा को अनुभव करतीं और गले मिलकर रोतीं—फिर माँ जी को अचानक कुछ ध्यान आता···वह अपने आँसू पोंछतीं, बहू की आँखें पोंछतीं और कहतीं, "पागल हो गई हो नम्रता—स्वीटी का ध्यान करो···।"

नम्रता का गला रुँध जाता···हिचकी बँध जाती—ऐसे दिन में कई-कई बार होता···वह एक-दूसरी को संभालतीं भी और रुलातीं भी—

सब रिश्तेदार वापस चले गए थे लेकिन नम्रता की मम्मी और उसके भैया अभी यहीं थे। वह निरन्तर यही प्रयत्न कर रहे थे कि नम्रता को साथ दिल्ली ले चलें किन्तु नम्रता अकेली इस दशा में सास को छोड़कर जाने के लिए सहमत न थी—

अखबारों में मेजर आनन्द की वीरता का वृतान्त छपा। बड़े साहस और धैर्य से चीनियों का सामना करते हुए उसने अपने प्राण दे दिये थे किन्तु चुशूल का हवाई अड्डा दुश्मन के हाथ न जाने दिया

था—उसी दस्ते के एक सिपाही ने बयान दिया था···मेजर आनन्द के कमाण्ड में वह लोग चुशूल से बहुत आगे दुश्मन को रोके हुए थे। उन्होंने चीनियों के तीन आक्रमणों को विफल कर दिया था—इस बीच में मेजर आनन्द के दस्ते का सफाया हो गया था। वह अकेला ही दुश्मन के चौथे आक्रमण का मुकाबला करने लगा क्योंकि अभी पीछे से सैनिक सहायता न आई थी—अचानक एक गोली उसे लगी और उसने अपने दस्ते के एक बचे हुए सिपाही को पीछे संदेश देकर भेजा—उस सिपाही ने घायल आनन्द को पीछे उठा ले जाने का प्रयत्न किया लेकिन मेजर आनन्द ने कहा, "तुम तुरन्त पिछली चौकी पर पहुँचो क्योंकि वायरलैस काम नहीं कर रही—मेरी चिन्ता मत करो—मुझ में जब तक प्राण हैं मैं दुश्मन को आगे नहीं बढ़ने दूँगा।"

आनन्द उसका कमाण्डिंग अफसर था इसलिए वह उसकी आज्ञा की अवहेलना नहीं कर सकता था—वह पिछली चौकी के लिए रवाना हो गया। इसके बाद जो कुछ हुआ इसका उसे ज्ञान नहीं क्योंकि पन्द्रह मिनट के बाद ही दुश्मन ने उस चौकी पर भारी हल्ला बोल दिया था। देश-भर में मेजर आनन्द की बहादुरी की चर्चा थी—

जब मम्मी के बहुत कहने पर भी नम्रता दिल्ली जाने के लिए तैयार न हुई तो नम्रता का भैया ब्रिज वापस चला गया और मम्मी नम्रता के पास ही ठहर गई ताकि उसका मन बहला सके। जो होना था सो हो चुका था···जाने वाला अब लौटकर न आ सकता था। इधर नम्रता की सास ने चारपाई पकड़ ली थी···चिन्ता और दुःख उसे भीतर-ही-भीतर खाये जा रहा था—दीमक की भाँति चाट रहा था।

आज सुबह से नम्रता की मम्मी नम्रता को समझा रही थी कि वह कुछ दिनों के लिए दिल्ली चली जाए···जब मन ठिकाने पर आ जाए तो वापस लौट आए—लेकिन नम्रता ने अपनी मम्मी की आँखों में उन विचारों को भी पढ़ लिया था जिन्हें अभी वह खुली जबान से कह न सकती थी—उसका सुहाग लुटे

नम्रता या तो अपने कमरे में बन्द आनन्द की तस्वीर से न जाने क्या-क्या बातें करती रहती और या अपनी सास की देखभाल करती··· उन्हें दवा देती···दवाती···और पूरा ध्यान रखती। स्वीटी अब नानी की गोद में सवार रहता क्योंकि दादी तो चारपाई पर पड़ी थी—और आज सुबह जब उसकी मम्मी ने उसे दिल्ली चलने के लिए कहा तो नम्रता क्षोभ में माँ से लड़ पड़ी और गर्जकर बोली, "मुझे कहीं नहीं जाना—मेरा इस दुनिया में कोई नहीं—मैं इसी घर में रहूँगी।"

इस समय नम्रता की मम्मी चुप हो गई। शाम के समय जब उदास घड़ियों ने नम्रता को घेरा और उसकी आँखों में अनायास आँसू निकल आए तो वह दिल में सोचने पर विवश हो गई कि यह जीवन क्योंकर बीतेगा—इतनी लम्बी जिन्दगी कैसे कटेगी?—ऐसी उदास घड़ियाँ ऐसे दुःख भरे क्षण उसके जीवन में क्यों आये हैं?—वह आनन्द की तस्वीर के सामने बैठी रोए जा रही थी कि अचानक दीवार पर लगे क्लॉक ने टिक-टिक करके शाम के सात बजने की घोषणा की और नम्रता चौंक पड़ी—उसकी दृष्टि सामने मेज़ पर रखी आनन्द की तस्वीर से हटकर उस दवाई की शीशी पर पड़ी जो वह हर रोज़ शाम के छः बजे अपनी सास को पिलाती थी—

उफ़—आज सात बज गए···उसने अपनी सास को दवाई नहीं पिलाई—नम्रता ने दोपट्टे में अपने आँसू सोखे और पलँग का सहारा लेकर उठखड़ी हुई—उसने क्षण-भर के लिए सोचा कि वह अपने कर्त्तव्य में लापरवाही वर्तने लग गई है–क्यों···? क्योंकि उसकी मम्मी उसके रास्ते में बाधा बन गई है क्योंकि वह हर समय छाया की तरह उसके पीछे पड़ी रहती है। नम्रता ने दिल में सोचा कि वह कल अपनी मम्मी से स्पष्ट रूप में कह देगी कि मम्मी तुम दिल्ली चली जाओ—मैं तुम्हारा यहाँ रहना सहन नहीं कर सकती—

नम्रता दवाई लेकर जब सास के कमरे में पहुँची तो उसकी मम्मी भी स्वीटी को लिए उसके पास बैठी थी—नम्रता ने अपनी मम्मी की ओर घूरकर देखा—उसकी मम्मी इस कड़ी दृष्टि को सहन न

रती हुई उठकर कमरे से बाहर चली गई। नम्रता की सास ने क्षण
र के लिए बहू की ओर देखा और बोली, "नम्मो—तू आज फि
ई—।"

"नहीं...माँ जी—।" नम्रता ने झूठ बोला।

"बेटी! मेरी आँखों में चाहे मोतिया उतर आया है लेकिन मेरे
आँखें अन्धी होकर भी देख सकती हैं—रो-रोकर तू अपनी जान क्य
ती है? अगर तुझे कुछ हो गया तो स्वीटी का क्या होगा?"

"माँ जी—नम्रता के मुँह से निराशा और पीड़ा में डूबी हु
आवाज निकली और उसने अपना सिर सास की गोद में रख दिया—

"नम्मो बेटी—!" सास ने नम्रता की पीठ सहलाते हुए कहा
"बेटी—तुझसे एक बात कहूँ।"

नम्रता ने हिचकी लेते हुए धीरे-से सिर उठाया और अपनी सास
और देवी की आँखों में देखा जहाँ ममता की जोत जल रही थी औ
बोली, "कहिए—माँ जी।"

"तुम कुछ दिनों के लिए अपनी माँ के पास चली जाओ।"

नम्रता ने अपनी सास की आँखों में एक बार फिर देखा—व
ममता की जोत जो क्षण-भर पहले जल रही थी धीरे-धीरे मन्द पड़त
ग रही थी। नम्रता ने सोचा उसकी सास को कैसे पता चला कि
म्मी उसे दिल्ली साथ ले जाने के लिए कह रही है—क्या उसक
म्मी ने अब दूसरा रास्ता अपनाया है? नम्रता कुछ देर माँ जी क
ओर देखती रही और फिर दृढ़ निश्चय से भरी आवाज में बोली
माँ जी! मैं कहीं नहीं जाना चाहती—।"

"बेटी—कुछ दिनों के लिए दिल्ली हो आओगी तो दिल बह
जाएगा—तुम्हारी मम्मी तुम्हारे भले के लिए ही कहती हैं—यहाँ
दा आनन्द की याद में आँसू बहाती रहती है—और फिर यह घ
रा है, जब जी चाहे वापस लौट आना—।"

"माँ जी!" नम्रता का गला रुंध गया और आँखों में आँसुअ
की झड़ी लग गई, "मैं यहीं रहूँगी—मैं आपको छोड़ कर नहीं

सकती—माँ जी ! मुझे अपने चरणों में रहने दीजिए...!"

"वेटी—!" सास ने अपनी निर्वल वाँहें फैला दीं। नम्रता इन निर्वल वाँहों को दृढ़ सहारा समझ कर उनमें समा गई।

"पगली—रोती क्यों है ? तू जानती है कि मुझसे तेरे आँसू नहीं देखे जाते—" और दूसरे क्षण सास की आवाज़ भी आँसुओं के धारे में वह गई। जाने कितनी देर तक दोनों वैठीं एक दूसरे के सीने से लगी आँसू वहाती रहीं कि पाँव की चाप सुनकर नम्रता अपनी सास के सीने से अलग हुई—

सामने नम्रता की मम्मी और सुधा भी खड़ी थीं। इन दोनों को रोता देखकर मम्मी और सुधा भी अपने आँसू रोक न सकी। सुधा ने आगे वढ़कर नम्रता को सहारा दिया और वलपूर्वक उसे वाहर ले गई।

उस रात भी रसोई का द्वार वंद रहा।

□

आखिर नम्रता की माँ कव तक वेटी के द्वार पर वैठी रहती—इसलिए वह वापस दिल्ली लौट गई।

नम्रता अपना समय सास की सेवा-शुश्रूषा में लगाती और या फिर अपने कमरे में वन्द होकर आनन्द की तस्वीर को सामने रखे उसकी स्मृति में खोई रहती—अव वस केवल स्मृतियाँ ही रह गई थीं।

आज शाम से ही आकाश पर वादल इकट्ठे हो गए थे···फिर उन्होंने झूमकर वरसना आरम्भ कर दिया। नम्रता ने जल्दी-जल्दी सास को खाना खिलाया और स्वीटी को सुला दिया। समय तो अभी केवल साढ़े आठ ही का था···लेकिन एक तो रात काली, इस पर घनघोर घटाएँ···सर्वत्र घना अंधेरा था। नम्रता अपने कमरे की ओर जाती-जाती क्षण-भर के लिए वरामदे में खड़ी हो गई।—हल्की-हल्की फुआर पड़ रही थी···वीच-वीच में कभी विजली कौंध जाती थी। नम्रता वरामदे के स्तम्भ के पास आई और वरखा को देखने

थी। आज सुबह ही से उसका मन बहुत उदास था क्योंकि उसकी सहेली सुधा ने उसे अपने घर में बुला कर कुछ बातें कही थीं। नम्रता तो न जाना चाहती थी किन्तु सास के कहने पर चली गई। अगर उसे मालूम होता कि सुधा इस प्रकार उसके जीवन में आग [illegible] देगी तो वह कदापि उसके यहाँ न जाती। किन्तु [illegible] लिए नम्रता ने ठंडे दिल से सोचा कि सुधा ने अपने [illegible] तो नहीं कहा था—उसने नम्रता से वही बात कही थी जो नम्रता ने कुछ वर्ष पहले सुधा से कही थी – उसकी भी तो यही जीवन स्थिति है—

नम्रता को आज इस बात का अनुभव हुआ था कि [illegible] करने में कितना अन्तर होता है। क्या सुधा को [illegible] बातें कह कर गई थी—क्योंकि [illegible] 'इनके' [illegible] की आँखों में देख के—उनके [illegible] नहीं था—वही वह [illegible] थी लेकिन वहाँ [illegible] और [illegible] —और आज सुधा ने अपने दिल की आवाज और [illegible] था। सुधा ने कहा था, "नम्रता! मेरी आयु ही कितनी है [illegible] क्यों अपना जीवन नष्ट करने पर तुली हुई है… [illegible] विचार कर… [illegible]"

[illegible]

भूति के नहीं बोल सकती तो तुझे दुःख भरे शब्द भी नहीं कहने चाहिएं, लेकिन क्या करूं तेरा दुःख मुझसे नहीं देखा जाता—फिर तेरी मम्मी की भी यही राय है—आखिर तू क्यों प्राण देने पर तुली हुई है—तेरे आगे केवल तेरा ही जीवन नहीं स्वीटी का भी भविष्य है—आखिर किस के सहारे तू शाम की उदास घड़ियां गुजारेगी…? आखिर इसमें बुरा क्या है ?" सुधा ने हर शब्द बड़े प्यार और और सहानुभूति के साथ कहा था—लेकिन नम्रता को हर शब्द आग की चिनगारी के समान लगा था—उसे अच्छा नहीं लग रहा था कि कोई उसे राह दिखाए—वह आनन्द को नहीं भूल सकती थी—उसके अमर प्यार को नहीं बिसरा सकती थी। उसने सुधा की आंखों में देखा, जहां अपनापन और सहानुभूति थी, और बोली, "सुधा ! तू चाहती है कि मैं दूसरी शादी कर लूं—और इस बूढ़ी सास को जिसका मेरे और स्वीटी के अतिरिक्त इस दुनिया में और कोई नहीं कुएं में धक्का दे दूं—उसे मैं किसके सहारे छोड़ जाऊं जिसका इकलौता बेटा मर गया है—तूने क्या ध्यान से कभी उसकी शक्ल भी देखी है ? बेटे की मौत ने उसे अधमरा कर दिया है—वह केवल स्वीटी को और मुझ को देखकर जिन्दा है—सुधा ! तुझे अपनी सहेली के भविष्य की चिन्ता है और मुझे अपनी सास का ध्यान है—और मेरे मन में जो आनन्द के प्रेम की जोत जल रही है…वह जोत अभी बुझी नहीं—तू शादी के लिए कहती है और मैं इस बारे में सोचना भी पाप समझती हूं—।"

सुधा ने बड़े ध्यान से नम्रता की बात सुन कर कहा था—"नम्रता ! ठीक है—आनन्द के प्रेम की जोत अभी तक तेरे मन में जल रही है—लेकिन इस जोत की निशानी के बारे में भी सोचा है ? —और फिर तेरी मम्मी और सास के बूढ़े शरीर कब तक तेरा साथ देंगे ? तब तेरी क्या दशा होगी ? हो सकता है तू अपने पांव पर खड़ी हो जाए—लेकिन इस भरी वहशी लोगों की दुनिया में एक जवान और सुन्दर विधवा का जिन्दा रहना बहुत-बहुत कठिन

है—मैं आज की नहीं कल की सोचती हूँ—कहीं ऐसा न हो कि तू न इधर की रहे न उधर की—अभी सब-कुछ हो सकता है—"

सुधा ने उसे समझाते हुए कहा तो एक पल के लिए नम्रता का मन डोल गया और उसने दिल में सोचा कि भगवान् न करे अगर कल को सास मर गई तो वह कहाँ जाएगी—लेकिन तभी उसकी आँखों के सामने आनन्द की छवि घूम गई—उसका सीना गौरव से फूल गया—उसने कुछ सोचा और बोली, "सुधा ! क्या दूसरी शादी करने ही से मेरा जीवन सुखी रह सकता है—और मान लो कल अगर मेरा दूसरा सुहाग भी उजड़ जाता है तो क्या मैं तीसरा सुहाग कर लूँगी ? क्या स्वीटी को नए घर में भी वही प्यार मिलेगा ? किसी और का खून समझकर वह लोग उससे घृणा न करने लगेंगे ? —या यह प्यार अगर केवल सहानुभूति तक सीमित रहेगा तो—? सुधा ! तेरी परिस्थिति अलग है—तूने अपने देवर से शादी कर ली है। राकेश का खून इसी परिवार का खून है—वहाँ रिश्ता सहानुभूति का नहीं बल्कि खून का है—अपना रिश्ता है—अभी इस समाज में इतनी जागृति उत्पन्न नहीं हुई कि दूसरे के खून को अपना खून समझा जाए—अच्छा सुधा ! अब मैं घर चलती हूँ···अभी मुझे रसोई का सारा काम करना है—।"

और नम्रता सुधा के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना घर चली आई थी—आज सारा दिन उसका मन उदास रहा था—

"अभी तक सोई नहीं बेटी नम्रता—क्या बात है—"

नम्रता माँ जी की आवाज़ सुनकर चौंक उठी। वह स्तम्भ से टेक लगाए अपने विचारों में खोई थी·· उसे आभास भी न था कि वह बारिश की हल्की फुहार में भीगती रही है—उसके पास उसकी सास खड़ी थी जो शायद किसी काम से बाहर आई थी और नम्रता को स्तम्भ के साथ लगे देखकर उसके पास आ गई थी—

"कुछ नहीं माँ जी—यूँ ही चंद क्षण के लिए यहाँ खड़ी हो गई थी—आप भी नहीं सोईं।"

सकती थी जब वह स्वयं ही अपने आँसू नहीं रोक सकती थी।

सुधा का पति आगे हो गया और दोनों सहेलियाँ इकट्ठी चलने लगीं—सुधा ने उससे कहा, "मेरी बात का तुमने बुरा तो नहीं माना…?"

"अरी पगली—तेरी बात का क्या बुरा मानना दुनिया तो इससे भी बड़ी-बड़ी बातें कह देती है—और फिर तूने कोई ऐसी बात नहीं कही थी जिसमें कि व्यंग हो।"

"नम्रता! रात मैंने इनसे बात की थी—अगर तू नौकरी के लिए तैयार है तो यह कहते थे कि एक स्कूल में तेरे लिए कुछ प्रबन्ध कर देंगे।"

"हूँ—माँ जी से पूछ कर बताऊँगी—वैसे आज नहीं तो कल, मुझे नौकरी तो करनी है—।"

सुधा ने नम्रता की ओर देखा और धीरे से बोली, "आज तुम्हें कितने बजे टैगोर थियेटर जाना है?"

"दस बजे—तुम भी चलोगी ना!"

"ज़रूर—"

फिर इधर-उधर की बातें करती हुई वह घर पहुंच गई। नम्रता जल्दी-जल्दी खाना तैयार किया क्योंकि पता नहीं था कि कितने बजे वह टैगोर थियेटर से फ़ारिग़ होगी। अभी खा पकाकर वह तैयार भी न हो पाई थी कि एक फ़ौजी जीप उनके दरवाज़े के सामने आकर रुकी—

वह लोग वास्तव में उन्हें लेने के लिए आए थे…क्योंकि वीरता के लिए राष्ट्रपति की ओर से राज्यपाल आज कई वीर सैनिकों को वीरता के पदक प्रदान करने वाले थे। मेजर आनन्द को शत्रु के सम्मुख अतुल्य शौर्य दिखाने के लिए मरणोपरान्त वीर-चक्र प्रदान होना था। जीप में नम्रता, उसकी सास, स्वीटी और सुधा सवार होकर टैगोर थियेटर के लिए रवाना हो गए।

टैगोर थियेटर में बहुत से लोग एकत्र थे जिनमें शहर के सभी

विख्यात नागरिक भी थे। नम्रता उसकी सास और सुधा को अगली पंक्ति में ससम्मान विठाया गया। पहले मुख्य मन्त्री का भाषण हुआ —फिर मिलिट्री बैंड पर राष्ट्रीय गीत की धुन बजाई गई जिस पर सब सावधान खड़े हो गए—इसके बाद राज्यपाल का आगमन हुआ और फिर राज्यपाल ने वीरों, उनकी पत्नियों अथवा निकट सम्बन्धियों को वीरता-पदक प्रदान करने आरम्भ किए।

जब गौर देवी···मेजर आनन्द की माता का नाम पुकारा गया तो नम्रता अपनी सास को लेकर मंच की ओर बढ़ी···सास और बहू दोनों ने सफेद वस्त्र पहन रखे थे—राज्यपाल ने मेजर आनन्द के बारे में बहुत कुछ कहा जिसे नम्रता न सुन सकी—उसके विचारों की धारा तो और ही कहीं बह रही थी—उसके कानों में रण-क्षेत्र में होती गोलियों की आवाज सुनाई दे रही थी···और उसे दिखाई दे रहा था शत्रु से लोहा लेता आनन्द—उसका अपना आनन्द। आखिर में राज्यपाल ने एक सुन्दर डिबिया में बन्द वीर-चक्र नम्रता की सास की ओर बढाया—कांपते हुए बूढ़े हाथों ने उस डिबिया को थाम लिया। नम्रता सास को सहारा देकर वापस अपनी सीट पर ले आई।

जब सब पदक दिए जा चुके तो फिर बैंड ने राष्ट्रीय धुन बजाई —और फिर हाल खाली हो गया—बिल्कुल ऐसे जैसे आनन्द की माँ की गोद खाली हो गई थी।

दूसरे दिन नम्रता अपनी सास की आँखें टैस्ट करवाने के लिए उसे आइस स्पैशलिस्ट ले गई। डाक्टर ने पहले आँखों में दवाई डाली— फिर आँखें बन्द करके दस मिनट तक बैठने के लिए कहा—नम्रता अपनी सास के पास ही बैठी रही···लेकिन स्वीटी उसे बाहर ले जाने के लिए हठ करने लगा। आखिर सास ने नम्रता से स्वीटी को बाहर ले जाने के लिए कहा।

बाहर डाक्टर की दुकान के सामने ही खिलौनों की दुकान थी। खिलौने देखकर स्वीटी हठ करने लगा—नम्रता सड़क पर घूमते हुए [illegible] ों में सुन्दर जोड़ों को देख रही थी···कई औरतों [illegible]

मोतिए के गजरे बाँध रखे थे…सुन्दर रंग-बिरंगे आंचल हवा में उड़ रहे थे—कितने निश्चित थे यह लोग…जैसे अखबार नहीं पढ़ते—रेडियो नहीं सुनते…नम्रता इन्हीं विचारों में खोई हुई थी…उधर स्वीटी निरन्तर हठ किए जा रहा था। तभी डाक्टर ने नम्रता को पुकारा तो नम्रता फिर डाक्टर की दुकान में घुस गई—लेकिन स्वीटी निरन्तर अपनी मम्मी की बाँहों में मचल रहा था—

उसे फिर मचलता देखकर सास ने पूछा, "नम्रता बेटी, क्या कह रहा है स्वीटी ?"

"कुछ नहीं— यूं ही व्यर्थ हठ कर रहा है।"

"क्या बात है स्वीटी ?"

"मैं वह…मोटर…" स्वीटी ने तोतली जुबान से अपना उद्द्श्य बताया।

"ओ—हम अभी अपने बेटे को मोटर ले देंगे…" दादी ने बाँहें फैला दीं और स्वीटी मम्मी की बाँहों से उतर कर दादी की ओर बढ़ा। थोड़ी देर बाद जब डाक्टर ने आँखों का निरीक्षण कर लिया तो बोला, "आँखें बहुत खराब हो चुकी हैं—यह दवाई ले जाइए… कम-से-कम एक महीना इसका प्रयोग कीजिए—इसके बाद आँखें देखकर नम्बर बतला दूंगा।"

"हूँ—।" नम्रता बेध्यानी में डाक्टर की बातें सुन रही थी।

उधर स्वीटी हठ करके अपनी दादी को बाहर ले गया था डाक्टर ने दवाई देते समय आनन्द की बातें छेड़ दीं और नम्रत डाक्टर की बातों का उत्तर देने लगी—

जब नम्रता दवाई के पैसे और फ़ीस देने लगी तो डाक्टर पैसे लेने से इन्कार कर दिया और बोला, "बेटी! यह पैसे रहने दो

"नहीं—डाक्टर साहब! आपको यह पैसे लेने पड़ेंगे।" नम्र ने कहा…

तभी एकाएक बाहर शोर सुनाई दिया। डाक्टर और नम्रता बाहर लपके—बाहर सड़क पर एक भीड़ इकट्ठी हो गई थी…।

"चलिए···आप लोगों को घर छोड़ आता हूँ"—विष्णु ने माँ जी के हाथों से स्वीटी को लेने का प्रयत्न किया किन्तु स्वीटी दादी के सीने से चिपट गया। विष्णु उन सब को कार में बिठाकर नम्रता के मकान पर ले आया—नम्रता ने अपनी सास से विष्णु का यह कहकर परिचय कराया कि यह भैया के मित्र और उसके क्लास फ़ैलो थे—उसे डर था कि वास्तविकता मालूम हो जाने पर उसकी सास उससे कहीं घृणा न करने लग जाए···अब वह विधवा थी और उसे एक-एक पग सम्भलकर रखना चाहिए था···दुनिया तो बात का बतंगड़ बना देती है···विष्णु ने स्थिति को भाँपते हुए हाँ में सिर हिला दिया।

विष्णु के मना करने पर भी नम्रता चाय बनाने चली गई···स्वीटी उस मोटर से खेलने लगा जिसे पाने के लिए वह कार के नीचे आते-आते बचा था···और माँ जी आनन्द के बारे विष्णु को बतलाने लगीं—जब तक माँ जी सारी बात कह नहीं पाईं नम्रता जान-बूझकर कमरे में नहीं आई क्योंकि वह विष्णु के सामने आँखों में आँसू लेकर नहीं जाना चाहती थी—वह एक बहादुर लड़की बनकर सब दुःख सह लेना चाहती थी—

माँ जी स्वयं भी रोईं, विष्णु को भी रुलाया और रसोई में बैठी नम्रता को भी—धीरे-धीरे मन का कुछ गुबार निकलने के बाद मन शान्त हुआ तो उन्होंने नम्रता को आवाज़ दी कि जल्दी चाय ले आए जब तक विष्णु वहाँ रहा माँ जी क्षण-भर के लिए भी इधर-उधर न हुईं—न जाने इस बात की अनुभूति विष्णु को हुई या नहीं लेकिन यह पहरा देखकर नम्रता के मन से एक हुक अवश्य उठी—इतना पहरा लेकिन क्यों···? विष्णु कोई पराया नहीं—क्या उन्हें मुझपर विश्वास नहीं···? फिर···!"

विष्णु ने जाने से पहले बताया कि वह यहाँ एक स्थानीय आर्ट गैलरी इंस्टीच्यूट का डायरेक्टर है—इस इंस्टीच्यूट में लगभग डेढ़-द सौ विद्यार्थी कला की शिक्षा लेते हैं—फिर आने का वचन देकर विष चला गया—

विष्णु के जाने के बाद मुहल्ले की एक औरत ने नम्रता से आकर कहा कि सुधा के लड़का हुआ है—

"कब हुआ है मौसी ?"

"अभी थोड़ी देर हुई—घर ही में केस करवाया है।"

"हूँ—" नम्रता को मन में प्रसन्नता-सी अनुभव हुई और फिर नम्रता अपनी सास से बोली, "माँ जी ! अगर आप कहें तो मैं थोड़ी देर के लिए सुधा के यहाँ हो आऊँ—।"

"जो—जाओ···।"

नम्रता के जाने के बाद वह औरत जो मुहल्ले में शायद इधर-से-उधर सूचनाएँ पहुँचाने का ही काम करती थी, नम्रता की सास से इस नये कार वाले विष्णु के बारे में कुरेद-कुरेदकर पूछने लगी—यह बात उसकी नई कहानी का आधार थी···नई गपशप का विषय···।

दस

मुहल्ले में एक नई कहानी ने अभी जन्म नहीं लिया था लेकिन ु ने दिल में एक नई कहानी के ताने-बाने आरम्भ कर दिए थे ाह नम्रता को बेसहारा समझकर और अपने दिल में दबी प्रेम की ारी से विवश होकर अपने रास्ते से भटकने लगा था—उस रास्ते ो उसने नम्रता की शादी के बाद अपनाया था।

अतीत की सब स्मृतियाँ उभर आईं और उसने निश्चय कर लिया वह नम्रता को सहारा देगा—उसके उदास होंठों पर मुस्कराहट ीत बिखेर देगा—यह सब कुछ वह क्यों करना चाहता था—कभी वह यह सोचकर स्वयं भी उदास हो जाता क्योंकि जो चिंगारी ह दिल में वर्षों से दबी हुई थी आज फिर शोले का रूप धारण लगी थी – लेकिन क्या यह चिंगारी नम्रता के दिल में भी ? क्या वह विष्णु को भूल गई है ?—विष्णु ऐसे ही विचारों में

घिरा प्राय: नम्रता के सामने मूर्तिमान् बैठा रहता—नम्रता विष्णु की मनोदशा समझती थी···लेकिन अब ऐसा सोचना तो वह पाप समझती थी—उसके मन में केवल एक ही जोत जल रही थी—अमर प्यार की जोत···वह अमर प्यार जो आनन्द उसे प्रदान कर गया था—यद्यपि इस जोत को बुझाने का नम्रता की माँ और सुधा ने बहुत यत्न किया लेकिन वह अडिग रही—यह जोत न बुझ सकी—वह दुनिया की प्रचण्ड आंधी का मुकाबला कर रही थी।

विष्णु नम्रता के यहाँ आने-जाने लगा···उसका मन बहलाने लगा—वह जब भी आता सबसे पहले स्वीटी को अपनी गोद में बिठाकर प्यार करता···शायद यही कारण था कि नम्रता की सास को विष्णु के आने-जाने पर इतनी आपत्ति नहीं थी जितनी ऐसी स्थिति में एक बूढ़ी को होनी चाहिए—नम्रता प्राय: सोचती कि अगर विष्णु ने इस जोत को बुझाने का प्रयत्न किया तो क्या वह मुकाबला कर सकेगी और तभी उसके अन्तर से एक आवाज़ उठती 'तूने अपने मन में अमर प्यार का जो भवन निर्माण किया है क्या वह इतना कमजोर और अस्थाई है—कि वह गिर जाएगा ???'—और नम्रता को विश्वास हो जाता कि वह विष्णु की दलीलों का उत्तर दे सकेगी—

दिन बीतते गये···न कभी विष्णु ने मन की बात कही और न नम्रता उसे अपने यहाँ आने से रोक सकी—

एक दिन विष्णु ने नम्रता से कहा अगर वह चाहे तो उसको अपने इंस्टीच्यूट में काम दिला सकता है—इससे एक तो उसका मन लगा रहेगा और दूसरे वह अपने सम्मान को रख सकेगी। नम्रता भी यह बात चाहती थी इसलिए कि एक तो अपने मन की नौकरी मिलना मुश्किल था और दूसरे अब उसे पुरुष बनकर ही अपने पैरों पर खड़ा होना था—लेकिन उसे अपनी सास के मन का पता नहीं था···शायद वह इसे पसन्द न करे—इस कारण जब विष्णु ने यह प्रस्ताव रखा तो नम्रता ने उसी समय हाँ न कही बल्कि इसे माँ जी की स्वीकृति और अनुमति पर छोड़ दिया।

उस दिन रात को जब उदासी की घड़ियाँ नम्रता को तड़पाने लगीं तो नम्रता ने अपना सिर सास की गोद में रख दिया।

"क्या बात है बेटी ?" सास ने अपनी बहू की पीठ सहलाते हुए बड़े प्यार से पूछा।

"माँ जी···एक बात कहूँ।"

"कहो—।"

"अगर मैं नौकरी कर लूँ तो—।"

"नौकरी—!" बूढ़ी सास ने अपने निर्बल मस्तिष्क से सोचा और फिर धीरे-से बोली, "नौकरी···? कहाँ···?"

"आज विष्णु आया था—उसने कहा है कि वह मुझे अपने इंस्टीच्यूट में नौकरी दिला देगा—केवल आपकी आज्ञा चाहिए।"

"क्या तू इस बात को पसन्द करती है ?" सास ने उल्टा प्रश्न कर दिया।

"जिन्दा रहने के लिए माँ जी ! कुछ-न-कुछ तो एक दिन करना ही पड़ेगा—।"

"हूँ—!" सास ने कुछ सोचा और फिर बोली, "नम्मो—जब तूने दिल में निश्चय कर लिया है तो फिर ठीक है—।"

नम्रता इस उत्तर से तड़प उठी—यह उत्तर उसके भावुक मन को बहुत अखरा। उसने सास की ओर देखा और क्षण-भर रुककर बोली, "नहीं माँ जी—मैंने दिल में कोई किसी प्रकार का निश्चय नहीं किया—अगर आप पसन्द नहीं करतीं तो मैं बिलकुल नौकरी नहीं करूँगी।"

"लेकिन वहाँ काम क्या होगा ?"

"बच्चों को कला सिखलाना···।"

"फिर ठीक है—" माँ जी ने अनुमति दे दी—नम्रता अपनी सास की गोद में आँखें बन्द करके पड़ी रही···माँ जी ने प्यार से अपना हाथ नम्रता के बालों में फेरते हुए धीरे-से कहा, "बेटी ! एक बात कहूँ···।"

"कहिए माँ जी—!"

"बेटी ! मुझे तुम पर भरोसा है लेकिन—।"

"लेकिन क्या ?"

"विष्णु अगर हमारे यहाँ कम आया करे तो—।"

"माँ जी—!" नम्रता चौंक उठी।

"नम्मो ! मैं जानती हूँ कि विष्णु बहुत अच्छा है लेकिन जिस समाज में हम रहते हैं वहाँ अभी इतनी स्वतन्त्रता नहीं—लोगों के दिलों में पाप भरा है...इसलिए मैं चाहती हूँ कि तुम हर पग सोच-समझ और देखकर बढ़ाओ।"

"माँ जी—!" नम्रता अब के चिल्ला-सी उठी।

"बेटी—मुझे तुम पर पूरा विश्वास है—लेकिन कोई तुम्हारी ओर उंगली भी उठाए यह मुझे सहन न होगा—किसी पराए पुरुष का अपने यहाँ आना मैं केवल इसलिए पसन्द नहीं करती कि अब आनन्द इस दुनिया में नहीं...न कि इसलिए कि मुझे तुझपर भरोसा नहीं...।"

आज नम्रता को मानसिक झटका-सा लगा—विधवा होने के बाद किसी से बात करना या किसी को अपने यहाँ आने देना दुनिया को कथा-वस्तु देता है...कहानियाँ बन जाती हैं...भ्रम और सन्देह उत्पन्न होते हैं—आखिर ऐसा जीवन क्योंकर बीतेगा...एक पल के लिए उसने यह सब सोचा लेकिन दूसरे ही क्षण उसकी आँखों के सामने आनन्द का मुस्कराता हुआ चेहरा आ गया जो मुड़कर यह कह रहा था—"अगर तुम मेरे अमर प्यार की जोत हमेशा जलती देखना चाहती हो तो दुनिया का धैर्य और साहस से मुकाबला करो—।"

बहू को यूँ गुमसुम देखकर गौर देवी ने नम्रता को गले से लगा लिया और बोली, "नम्मो बेटी—तू उदास मत हुआ कर...मुझसे तेरा उदास होना देखा नहीं जाता।"

"माँ जी—।" रुका हुआ तूफ़ान बह निकला।

"जाने कितनी देर तक गौर देवी नम्रता का सिर सहलाती रही

ौर जाने कब नम्रता की आँख लग गई—लेकिन अचानक ही वह
ोई सपना देखकर बड़बड़ा उठी, "मैं कहाँ—?"

"मेरी गोद में तुम सो गई थीं।"

"ओह—" नम्रता अपनी सास की गोद में से उठते हुए बोली—
आप लेटिये माँ जी—मैं आपकी आँखों की दवाई लाती हूँ—आज
ो मैं सब कुछ भूल गई।"

"इस समय क्या जरूरत है—।"

"जरूरत है···।"

सास की आँखों में दवाई डालने के बाद जब नम्रता अपने कमरे
सोने के लिए गई तो मेज पर आनन्द की तस्वीर देखकर उदास-
ी हो गई—कुछ सोचकर उसने वह तस्वीर उठा ली और उसे पहलू
रखकर लेट गई। आज वह इस तस्वीर से जी भरकर बातें करना
थी—आज यह विचार उसके मस्तिष्क पर बुरी तरह छा
—इस दुनिया में विधवा का जिन्दा रहना इतना कठिन क्यों
ं पग-पग पर उसके सामने आपत्तियाँ आती हैं? क्यों···
बँधी-बँधी-सी है···? वह सारी रात आनन्द से बातें करती
ौर जाने कब उसकी आँख लग गई···

ह जब वह बाल धोकर धूप में सुखाने के लिए छत पर आई
ो दूसरे मकान की छत पर सुधा अपने पति के साथ बैठी हुई
र रही थी···उसकी लड़की पास ही खेल रही थी और छोटा
ारपाई में लेटा हुआ हाथ-पाँव मार रहा था—जाने किस बात
पत्नी दोनों मुस्करा पड़े—और फिर जाने सुधा ने अपने पति
में क्या कहा कि एक बार फिर दोनों खिल-खिलाकर हँस
ने आज क्या बात थी कि नम्रता से यह न देखा गया और
यों की ओर लपकी। नीचे उसकी सास स्वीटी को गोद में
ा थी और उसे हँसाने का प्रयत्न कर रही थी—सास ने नम्रता
और बोली, "क्या बात है—बाल सूख गए—आओ तेल लगा

"अगर तेरे मन में खोट नहीं तो आज तूने विष्णु से मिलने से इन्कार क्यों कर दिया—? तेरे कदम डगमगा गए हैं—।"

"नहीं···नहीं···" नम्रता चिल्ला उठी,"मेरे मन में केवल आनन्द का प्रेम है—मैं किसी से नहीं डरती···।"

ड्रेसिंग टेवल के शीशे वाली नम्रता ने एक ठहाका लगाया और वोली, "क्या तुम विष्णु के इंस्टीच्यूट में जाओगी ? नहीं नहीं—अव तुम वहाँ नहीं जाओगी—।"

नम्रता अपने स्थान से उठी और शीशे के पास आकर वोली, मैं जाऊँगी—जरूर जाऊँगी···।"

"तभी नम्रता की सास कमरे में प्रविष्ट हुई और वोली, "क्या वात है नम्रता वेटी ?"

"कुछ नहीं—।" नम्रता ने सिर झुका लिया।

"वेटी तुझे कई वार कहा है कि दिन को न सोया कर···वुरे-वुरे सपने आते हैं।"

"नहीं माँ जी···मैं कोई सपना नहीं देख रही।"

"थोड़ी देर पहले विष्णु आया था···?"

"हूँ—।"

नम्रता ने चोर दृष्टि से अपनी सास को देखा तो उसकी सास ने आगे बढ़कर अपना हाथ उसके सिर पर रखकर कहा, "तुम्हारी नौकरी की वावत कह रहा था—मैंने अनुमति दे दी है—।"

"जी—।" नम्रता ने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ—यह फ़ैसला मैंने वहुत सोचकर किया है—तुम कल चली जाना।"

"अच्छा माँ जी—।"

तभी सुधा अपने छोटे वच्चे को लेकर प्रविष्ट हुई···माँ जी कुछ सोचकर वाहर चली गईं।

ग्यारह

नम्रता ने विष्णु के इंस्टीट्यूट में नौकरी कर ली जिस बात का नम्रता को डर था वह बात बिलकुल न हुई थी। वह डर रही थी कि इंस्टीट्यूट में विष्णु उसके पास शायद बहुत आने-जाने लगे—लेकिन इंस्टीट्यूट में उसका व्यवहार बहुत बदला हुआ था। वह नम्रता से बिलकुल ऐसे ही मिलता जैसे वह इंस्टीट्यूट के दूसरे स्टाफ से मिलता था। वह न बिना किसी विशेष काम नम्रता को अपने कमरे में बुलाता और न ही अकारण उसे मिलने का प्रयत्न करता। इंस्टीट्यूट में बड़ा शान्त वातावरण था···नम्रता ने कई बार सोचा कि वह पहले क्यों न इंस्टीट्यूट में आ गई।

दिन बीतने लगे। एक दिन क्लास खत्म होने के बाद नम्रता जब घर जाने लगी तो चपरासी ने आकर नम्रता से कहा, "डायरेक्टर साहब ने आपको बुलाया है—।"

जब नम्रता विष्णु के कमरे में पहुँची तो कमरे में अकेला ही विष्णु बैठा था। नम्रता को देखते ही वह अपनी कुर्सी पर से उठा और उसे बैठने के लिए कहा—

नम्रता चुपचाप एक कुर्सी पर गिर-सी गई। आज जाने क्या बात थी कि नम्रता का दिल धड़क रहा था···यद्यपि वह पहले कई बार विष्णु के कमरे में आ चुकी थी—उसका मन यह कह रहा था कि विष्णु ने उसे किसी असाधारण बात पर बुलाया है।

इतने में चपरासी कमरे में चाय की ट्रे लेकर आया और चाय बनाने लगा—एक प्याला उसने नम्रता के आगे रखा और दूसरा विष्णु के आगे।

"अब तुम जाओ···।" विष्णु ने चपरासी से कहा और वह कमरे से बाहर निकल गया तो विष्णु ने नम्रता की ओर देखते हुए कहना आरम्भ किया, "नम्रता, एक इच्छा बहुत समय से मन में बार-बार उभरती थी किन्तु मैं हर बार इस इच्छा का गला घोंट देता था।

लेकिन आज इस इच्छा ने विवश कर दिया है और वह मैं तुमसे [illegible] चाहता हूं—" यहां पर रुक कर विष्णु ने चाय का प्याला [illegible] ओर होंठों तक ले गया।

नम्रता कांप सी रही थी कि कहीं विष्णु आज सारे बन्धन तोड़ कर उसे अतीत की ओर तो ले नहीं जाना चाहता—इसलिए नम्रता ने एक क्षण विष्णु का चेहरा पढ़ा···उसका चेहरा शान्त था···कोई भावुकता का चिह्न नहीं था···

विष्णु ने कहा, "अगर तुम्हें मेरी बात स्वीकार न हो तो साफ़ इन्कार कर देना—मैं तुम्हें विवश नहीं करूँगा···" तभी टेलीफ़ोन की घंटी बजी और विष्णु ने रिसीवर उठाया।

इधर नम्रता बेंत के समान कांप कर रह गई थी—उसने सोचा बस अब एक ही क्षण की बात है जब विष्णु सारे नाते तोड़ देगा··· सारे भ्रम क्षण भर में समाप्त कर देगा—लेकिन वह क्या जाने कि जो अमर प्यार की जोत नम्रता ने अपने मन में जला रखी है वह कभी नहीं बुझ सकती—इसलिए बेहतर है कि विष्णु की बात सुनने से पहले अपना फ़ैसला उसे सुना दूं ताकि उसकी दृष्टि में विष्णु का सम्मान न गिर जाए···

विष्णु ने रिसीवर रखा और नम्रता की ओर देखता हुआ बोला, "तुम्हें क्या हुआ—तुम घबरा क्यों रही हो ?"

"हूँ—" नम्रता संभली और साहस बटोर कर उसने कहा, "आपकी बात सुनने से पहले मैंने निर्णय कर लिया है—।"

"निर्णय···?" विष्णु ने आश्चर्य से कहा।

"हाँ—।"

"क्या···?" विष्णु ने भी दिल की बात को रहस्यमयी बना दिया।

"मैं वह बन्धन नहीं तोड़ सकती जो तुम चाहते हो—मेरे हृदय में जो आनन्द का असीम प्यार भरा है वह कभी समाप्त नहीं हो सकता—और मुझे मालूम न था कि आप यह कहने का साहस

रँगे···।"

"लेकिन मैंने कोई ऐसी बात तो कही नही।"

"फिर आपका मतलब···?"

"मतलब—।" विष्णु एक क्षण के लिए रुका और नम्रता की ोर देखकर बोला, "मैं तो केवल यह कहना चाहता था कि मैं म्हारा एक पोर्टरेट बनाना चाहता हूँ—अगर तुम अनुमति दो ो—।"

"पोर्टरेट···!" नम्रता की आवाज डूब-सी गई।

"हाँ—कल इतवार है—क्यों न हम पिञ्जौर बाग में चलें—।"

"मैं न जा सकूँगी—।"

"मैंने पहले ही कहा था···विवश नही करूँगा।"

"लेकिन मैं अपनी विवशता अवश्य बतलाऊँगी ताकि तुम मुझे मझने में भूल न करो···।"

"समझने की भूल···!" विष्णु ने पहली बार नम्रता की आँखों ं देखने का प्रयत्न किया—उसकी आँखों में आँसू थे···। "नम्रता ! म्हारी आँखों में आँसू···।"

"विष्णु···! मैं एक विधवा हूँ।" नम्रता ने एक बन्धन तोड़ दिया। उसकी आवाज में असीम वेदना थी। "आज मुझे सारे समाज ो आज्ञा लेनी पड़ती है—क्योंकि विधवा होने के साथ मैं अभी जवान —।"

"नम्रता ! तुमने एक बार स्वयं अपने प्रोफेसर श्री वास्तव की हानी सुनाई थी···प्रेम जिस हृदय में एक बार घर बना लेता है फिर वहीं रहता है—तुम्हें अपने ऊपर भरोसा होना चाहिए।"

"भरोसा···! अगर न होता तो—"नम्रता जाने आगे कुछ क्यों न कह सकी।

विष्णु बोला, "इस समाज में अगर रहना है तो अपना अधिकार छीनो—और अगर अपना अधिकार नही छीन सकते तो—"

"तो क्या—?" नम्रता के मुँह से निकला।

"अनन्त की नींद सो जाओ—।"

हूँ—।" नम्रता ने क्षण भर कुछ सोचा फिर बड़े विश्वास के साथ बोली, "मैं कल पिंजौर बाग चलूँगी।"

"स्वीटी को साथ लाना।"

"अच्छा—अब मैं चलती हूँ।"

"सुबह मैं प्रतीक्षा करूँगा—ठीक आठ बजे।"

और फिर नम्रता कुछ सोचती हुई बाहर निकल गई।

□

वृक्षों के एक झुंड में नम्रता स्वीटी को गोद में लिए बैठी थी और उससे कुछ दूरी पर विष्णु ईज़ल के पास खड़ा एक नज़र से नम्रता और स्वीटी को देखता और दूसरे क्षण उसके हाथ में पकड़ी हुई तूलिका कैनवस पर चल पड़ती। आकाश में बादल छाए हुए थे··· मस्त हवा के झोंके वृक्षों की टहनियों से लिपटे जा रहे थे। सामने थोड़ी दूरी पर फव्वारा चल रहा था और हल्की-हल्की फुहार हवा के झोंकों के साथ नाचती हुई कभी इधर कभी उधर गिर रही थी—

जाने कितनी देर से विष्णु ने दिल को बाँध रखा था और जब दिल फटने लगा तो उसने दिल की बात नम्रता से करने का फ़ैसला कर लिया। उसने एक गहरी दृष्टि नम्रता पर डाली और बोला, "नम्रता···! एक बात पूछूं ?"

"पूछिए···।"

"जीवन के इस सुनसान और उजाड़ पथ पर चलते हुए क्या तुम कोई अभाव अनुभव नहीं करतीं···किसी सहारे की आवश्यकता नहीं होती···?"

नम्रता ने विष्णु की ओर देखा···लेकिन आज वह विष्णु की दृष्टि को न काट सकी इसलिए कि आज विष्णु ने शायद दृढ़ निश्चय कर लिया था कि अब अगर वह दुर्बलता दिखा गया तो फिर कभी दिल की बात न कह सकेगा—और क्या जाने फिर जीवन में कभी ऐसा एकान्त प्राप्त हो कि ना···ऐसा अवसर मिले न मिले···

पड़ती है।"

"जिसमें आहुति देने की शक्ति नहीं वह इस योग्य नहीं होता कि उसकी पूजा की जा सके—।"

इस बार फिर नम्रता का उत्तर नपा-तुला और सुलझा हुआ था—

"लेकिन आहुति का यह अभिप्राय तो नहीं कि अपने साथ दूसरों के जीवन का भी बलिदान कर दिया जाए···।"

"क्या मतलब···?" उसी समय स्वीटी मम्मी की गोद से निकलकर घास पर खेलने लगा था। विष्णु की दृष्टि स्वीटी पर जमी थी—नम्रता प्रश्न की गहराई तक पहुँच गई थी।

नम्रता को चुप देखकर विष्णु ने एक बार फिर अपनी तूलिका नीचे रखी और नम्रता के पास आकर बोला, "नम्रता! तुम अपने जीवन का बलिदान दे सकती हो···लेकिन इस अबोध बालक ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

"विष्णु—!" नम्रता चिल्ला उठीं, "क्या तुम मुझे यहाँ इसलिए लाए थे—मैं कुछ नहीं जानती—मेरे हृदय में केवल एक ही जोत जल रही है···वह है आनन्द के अमर प्यार की—और उसके लिए एक जन्म तो क्या मैं कई जन्मों को न्योछावर कर सकती हूँ—।"

"कभी यही बात तुमने मेरे लिए भी कही थी—क्या शादी का बन्धन तोड़ने के लिए मैंने तुम्हें कभी पहले कहा था—केवल तुम्हारी खुशी के लिए मैंने अपने जीवन की आहुति दी थी—लेकिन आज तुम स्वीटी के जीवन···उसके भविष्य का ध्यान नहीं कर रहीं—यह मुझसे सहन नहीं हो सकेगा···!"

"मगर तुम कौन हो? तुम्हारा क्या सम्बन्ध है?" नम्रता घबराहट में चिल्ला उठी।

"मैं···।" विष्णु की जुबान उसका साथ न दे सकी—उसे यह आशा नहीं थी कि नम्रता उससे यह भी कह देगी कि तुम कौन हो—आखिर बड़े प्रयत्न के बाद उसने अपने भावों को बस में किया

धीरे-से बोला, "वापस चलने की तैयारी करो···।" और स्वयं सामान समेटने लगा।

नम्रता अपने स्थान पर व्याकुल थी और विष्णु अपने स्थान पर—रास्ते-भर दोनों मौन रहे···दोनों के मनोमस्तिष्क में तूफ़ान उमड़ते रहे जिन्हें होंठों पर न लाया जा सका। नम्रता को उसके घर पर छोड़कर विष्णु बिना कुछ कहे बाहर ही से वापस लौट गया।

नम्रता रात-भर उदास और मलीन रही—उसे अपने आप पर क्षोभ आ रहा था कि क्यों उसने यह बात विष्णु से कही—उसे कुछ साहस और धैर्य से काम लेना चाहिए था—आखिर उसने मन में निश्चय कर लिया कि सुबह वह विष्णु से क्षमा मांग लेगी···इसी प्रकार की सान्त्वना मन को देकर वह सो गई।

दूसरे दिन इंस्टीच्यूट में जाकर नम्रता को मालूम हुआ कि आज विष्णु आया ही नहीं···और फिर यह अनुपस्थिति लम्बी होती चली गई—अन्त में एक दिन नम्रता को पता चला कि विष्णु बीमार पड़ गया है।

नम्रता चाहते हुए भी विष्णु के यहाँ न जा सकी।

बारह

समय की डोरी धीरे-धीरे कट रही थी। नम्रता इंस्टीच्यूट जाती, बच्चों को पढ़ाती और वापस लौट आती। उसके जीवन में न कोई आकर्षण था और न कोई आशा—वह केवल ज़िन्दा थी अपनी सास और स्वीटी के लिए वरना पति के अभाव ने उसे एक ज़िन्दा लाश बना दिया था—

विष्णु ने लम्बा अवकाश ले रखा था इसलिए उससे भेंट होने की कोई सम्भावना न थी···नम्रता स्वयं उसके यहाँ नहीं जाना चाहती थी—

इधर माँ जी ने फिर कुछ दिनों से चारपाई पकड़ ली थी—अब वह सीधी इंस्टीच्यूट से आते हुए दवाई लाती और घर का सारा काम-काज सम्भालती···फिर सास की देख-भाल करती···कुछ समय स्वीटी को खिलाने-पिलाने-नहलाने में बीत जाता···

एक दिन इंस्टीच्यूट में छुट्टी थी—वह अकेली लॉन में बैठी कोई उपन्यास पढ़ रही थी कि सुधा आ गई। आज सुबह से ही आकाश काले बादलों से ढका हुआ था। नम्रता नावल पढ़ने में इतनी व्यस्त थी कि उसे सुधा के आने की खबर भी नहीं हुई। वह तब चौंकी जब सुधा उसके पास आकर बैठ गई और बोली, "कौन-सा नावल पढ़ रही हो ?"

"हूं—कौन ? तुम···!"

"बहुत खोई हुई-सी हो—।"

"हाँ—नावल ही ऐसा है—जब कभी मैं ऐसा नावल पढ़ती हूं तो सब-कुछ भूल जाती हूं—"

"कौन-सा नावल है ?"

"लस्ट फ़ॉर लाईफ़···इर्विंग स्टोन का—इसे तीसरी बार पढ़ रही हूं···।"

"क्या इतना रोचक है···?"

"हाँ—क्योंकि···" अचानक नम्रता मौन हो गई।

"क्योंकि—क्या ?" सुधा ने पूछा।

"इस बार नावल पढ़ने के बाद मैं अपने आपको 'कैथरीन' के रूप में देख रही हूं।"

"कैथरीन कौन ?"

"इस नावल में एक पात्र है—वह भी मेरी भाँति विधवा हो चुकी थी—उसका भी एक बच्चा था और—।" नम्रता फिर चुप हो गई···

"और···क्या···?"

"और एक आर्टिस्ट ने उससे प्रेम करना चाहा था—सुधा, मैं बहुत दिनों से बेचैन हूं—कुछ समझ में नहीं आ रहा क्या करूं···?"

"क्या मुझ से मन की बात न कहोगी ?"

"तुमसे न कहूँगी तो किससे कहूँगी···मेरा कौन है।"—और इसके बाद नम्रता ने विष्णु के बारे में सब-कुछ बतला दिया।

सुधा ने सब सुनने के बाद कहा, "नम्रता, तुम मेरी बात मानो किसी दृढ़ बांहों का सहारा ले लो।"

"सुधा यह नहीं हो सकता—मैं आनन्द की याद को मन से नहीं मिटा सकती।"

"लेकिन तुम विष्णु से भी तो प्रेम करती थीं।"

"लेकिन शादी से पहले···।"

"और शादी के बाद तुम पति से प्रेम करने पर विवश हो गईं—एक कर्त्तव्य समझकर—क्यों ठीक है न।" सुधा ने तर्क प्रस्तुत करना चाहा।

"कर्त्तव्य समझकर तो सभी औरतें पतियों से प्रेम करती हैं—लेकिन मुझे तो आनन्द के प्रेम ने विवश कर दिया था।"

"क्या दूसरों के पति प्रेम नहीं करते ?"

"ऐसा तो मैंने नहीं कहा,—और न मैं जानती हूँ—लेकिन यह मैं जानती हूँ कि शादी के बाद आनन्द ने मुझे इतना प्यार दिया था कि मैं सब-कुछ भूलकर उसके प्यार में खो गई थी—।"

"नम्रता ! यह जीवन इन्सान को बार-बार नहीं मिलता—इस समाज में जिन्दा रहने के लिए कभी-कभार अपने जीवन की आहुति भी देनी पड़ती है—।"

"क्या मतलब ?"

"तुम अपने जीवन की आहुति देना चाहती हो—लेकिन एक कर्त्तव्य समझकर।"

"नहीं—ऐसा नहीं—मैं आनन्द के प्रेम को नहीं बिसरा सकती—मेरा प्रेम कर्त्तव्य नहीं—।"

"लेकिन अब तुम्हारे प्रेम को कर्त्तव्य बनना चाहिए···"

"क्यों—?"

"विष्णु के जीवन के लिए।" सुधा ने नया दर्शन खड़ा कर दिया।

"विष्णु का जीवन—क्या मतलब ?"

"क्या तुम्हारे वैवाहिक जीवन में विष्णु ने कभी दीवार बनने का प्रयत्न किया था ?—मेरे विचार में नहीं—और अब इस बलिदान का बदला शायद तुम उसे विष का प्याला या पिस्तौल की एक गोली देना चाहती हो—।"

"नहीं, नहीं—मैंने तो ऐसा कदापि नहीं सोचा।" नम्रता चिल्ला उठी।

"ऐसे भावुक कलाकारों का अन्त प्रायः ऐसा ही होता है—तुम विष्णु को ठुकरा सकती हो लेकिन उसके प्रेम को नहीं ठुकरा सकती—हां, अगर तुम विष्णु को इस प्रेम से वंचित रखना चाहती हो तो अलग बात है···" सुधा ने समझाते हुए कहा।

"सुधा ! तुम मुझे अपने रास्ते से भटकाना चाहती हो—तुम मुझे पथ-भ्रष्ट करना चाहती हो।"

"नम्रता मुझपर विश्वास रखो—तुम्हारी पुरानी सखी हूं—तु ा बुरा कभी नहीं चाहूंगी—आगे निर्णय करने का तुम्हें पूरा अधिकार है।"—और फिर वह नम्रता का उत्तर सुनने से पहले बोली, "जरा बाईस सैक्टर तक चलोगी ?"

"क्यों—?"

"राखी का त्योहार आ रहा है—राखी खरीदनी है।"

"ओह—वह तो मुझे भी खरीदनी है—चलो···मैं मां जी से पूछ लूं—।"

"थोड़ी देर के बाद दोनों सहेलियां बाईस सैक्टर के लिए रवाना हो गईं—



राखी के त्योहार पर अचानक नम्रता का भैया और उसकी नानी आ गईं—इनके आने से घर में रौनक-सी आ गई थी···लेकिन नम्रता के मन में एक भय-सा उत्पन्न हो गया···कहीं मम्मी के समान

भी और मामी ने भी उसे विवश करना चाहा तो वह क्योंकर उनका उत्तर देगी। इस विषय पर वह जितना भी सोचती उतनी ही उसकी उलझन और अधिक बढ़ जाती—और फिर नम्रता ने सब-कुछ परिस्थितियों के दायरे पर छोड़ दिया…जैसा होगा देखा जाएगा—

नम्रता की मामी जब से आई थी हर समय स्वीटी को उठाए नम्रता की सास के पास बैठी खुसर-फुसर करती रहती—नम्रता जब भी मामी को अपनी सास के पास बैठी देखती तो उसे एक घबराहट-सी छिड़ जाती…जाने आने वाले चन्द क्षणों में क्या होगा??—।

हर बहन को अपने भाई और भावज के आने की प्रसन्नता होती है लेकिन नम्रता को उनका आना अच्छा न लगा था—क्योंकि उनके आने से उसे ऐसे अनुभव होने लगा था जैसे यह लोग उसके जीवन में कोई तूफान लाने वाले हों…ऐसा तूफान जो उसे छिन्न-भिन्न कर जाए…जो थोड़ा-बहुत जीवन-निर्वाह का मार्ग वह अपना पाई है उससे वह उसको विचलित कर देना चाहते थे—एक रात जब नम्रता अकेली लॉन में चारपाई डाले लेटी हुई थी कि उसकी मामी चारपाई के पास आई…नम्रता ने मामी के लिए जगह छोड़ दी और उसे बैठने को कहा।

"क्या सोच रही हो—" बाली ने बैठते ही पूछा।

"कुछ नहीं—।"

"नम्रता! एक बात पूछूं।"

"जी—।"

"विष्णु यहाँ प्रायः आया करता है—?"

नम्रता एक पल के लिए काँपकर रह गई—उसके पूरे शरीर में एक घुमती हुई लहर-सी दौड़ गई…बाली ने उसकी ओर देखते हुए कहा, "तुम्हारी सास कह रही थी कि उसी ने तुम्हारी नौकरी लगवाई है—।"

"हाँ—।" नम्रता ने एक लम्बी सांस ली—।"

"मैंने तुम्हारे भैया से भी बात की है—।"

"जी—।"

"औरत···और फिर जवान औरत का जीवन बिना पति के अधूरा है—यह मेरा ही नहीं बल्कि मम्मी और तुम्हारे भैया का भी विचार है कि तुम दूसरी शादी कर लो—।"

"भाभी—!" नम्रता चिल्ला उठी। उसने कमरे की ओर देखा कि कहीं उसकी सास बैठी तो यह बातें नहीं सुन रही।

बाली ने उसकी घबराहट का अनुमान लगाते हुए कहा, "तुम्हारी सास छत पर स्वीटी को सुला रही है—मेरे विचार में दूसरी शादी करने में कोई हानि नहीं।"

"भाभी—यह तुम कह रही हो ?"

"मैं ग़लत तो नहीं कह रही—और फिर एक समय था जब तुम स्वयं विष्णु से शादी करना चाहती थीं···और आज हम अपने हाथों तेरा हाथ विष्णु को थमाना चाहते हैं।"

"भाभी ! कल की बात आज नहीं हो सकती—अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों समय परिवर्तन और समय के अन्तर के नाम हैं—उस समय आप सबने मिलकर समाज और अमीरी की दीवार खड़ी की थी···मैं उस दीवार को गिराना चाहती थी किन्तु आपने मेरी नहीं सुनी, नहीं मानी—अब मैंने एक नई दीवार अपने गिर्द खड़ी कर ली है और यह दीवार मेरे पति आनन्द के प्यार की है—मैं दूसरी शादी कदापि नहीं करूँगी—अगर आप मुझ पर अधिक बल डालेंगे तो मैं आत्महत्या···।"

इससे पहले कि नम्रता वाक्य पूरा करती बाली ने अपना हाथ उसके मुँह पर रख दिया और धीरे-से बोली, "नम्रता ! भावुक न बनो—समय बड़े-बड़े घावों को भर देता है—आज की हठ यदि कल तुम्हारे जीवन में कोई दाग़ लगा दे तो—।"

"दाग़—! क्या मतलब ?" नम्रता उठ बैठी।

"एक जवान औरत का इस समाज में विधवा हो जाना एक बहुत ड़ा अपराध ही नहीं एक बड़ा दण्ड भी है—किसी के साथ हँसकर त करना ही माथे पर कलंक लगा देना—नम्रता, फिर हम सभी ी भलाई चाहते हैं…आज सुधा से भी बात हुई थी…उसे भी तूने दूसरी शादी के लिए विवश किया था—आज उसकी ओर देख, च्छा खाती है…अच्छा पहनती है…नये प्यार में रम गई है—ारी ओर तू…अन्दर-ही-अन्दर घुल रही है…न अपना ध्यान, न ोटी की चिन्ता—तेरे भैया विष्णु से मिलने गए हैं—तू भली प्रकार च ले…आखिर यह जीवन की लम्बी राह तू कैसे तय करेगी…?"

"भाभी ! मेरी समझ में कुछ नहीं आता।"

नम्रता का मस्तिष्क सुन्न हो गया था—उसे एक से लड़ना होता ' वह उत्तर दे लेती किन्तु यहाँ जो भी आता होंठों पर एक ही ामर्श लिए आता कि दूसरी शादी कर लो…लेकिन किसी ने भी सके मन में झाँकने का प्रयत्न नहीं किया—उसकी वेदना की गह-ई को नहीं आँका…

नम्रता गुमसुम-सी लेट गई और उसकी भाभी बाली उसका सिर हलाने लगी—और प्यार से कहने लगी, "नम्मो ! मेरी एक बात न—थोड़े दिनों के लिए हमारे साथ दिल्ली चली चल। जब तेरा ल वहाँ न लगे तो वापस लौट आना—रही शादी की बात…हम ग तुझे रास्ता दिखा सकते हैं…तेरा अच्छा सोच सकते हैं…थोड़ा वश भी कर सकते हैं लेकिन अन्तिम निर्णय तुम्हारा ही है…बल-कि हम कुछ नहीं कर सकते…।"

नम्रता सोचों के गहरे सागर में डूब गई। बाली ने प्यार से उसका र अपनी गोद में डाल लिया और नम्रता की सूरत देखकर उसकी ाँखों से भी आँसू निकल आए।

ब्रिज ने नम्रता की सास से गोलमोल-सी बात कर ली कि वह े कुछ दिनों के लिए दिल्ली साथ ले जाना चाहते हैं। नम्रता की

"मैंने तुम्हारे भैया से भी बात की है—।"

"जी—।"

"औरत…और फिर जवान औरत का जीवन बिना पति के अधूरा है—यह मेरा ही नहीं बल्कि मम्मी और तुम्हारे भैया का भी विचार है कि तुम दूसरी शादी कर लो—।"

"भाभी—!" नम्रता चिल्ला उठी। उसने कमरे की ओर देखा कि कहीं उसकी सास बैठी तो यह बातें नहीं सुन रही।

बाली ने उसकी घबराहट का अनुमान लगाते हुए कहा, "तुम्हारी सास छत पर स्वीटी को सुला रही है—मेरे विचार में दूसरी शादी करने में कोई हानि नहीं।"

"भाभी—यह तुम कह रही हो ?"

"मैं ग़लत तो नहीं कह रही—और फिर एक समय था जब तुम स्वयं विष्णु से शादी करना चाहती थीं…और आज हम अपने हाथों तेरा हाथ विष्णु को थमाना चाहते हैं।"

"भाभी ! कल की बात आज नहीं हो सकती—अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों समय परिवर्तन और समय के अन्तर के नाम हैं—उस समय आप सबने मिलकर समाज और अमीरी की दीवार खड़ी की थी…मैं उस दीवार को गिराना चाहती थी किन्तु आपने मेरी नहीं सुनी, नहीं मानी—अब मैंने एक नई दीवार अपने गिर्द खड़ी कर ली है और यह दीवार मेरे पति आनन्द के प्यार की है—मैं दूसरी शादी कदापि नहीं करूंगी—अगर आप मुझ पर अधिक बल डालेंगे तो मैं आत्महत्या…।"

इससे पहले कि नम्रता वाक्य पूरा करती बाली ने अपना हाथ उसके मुंह पर रख दिया और धीरे-से बोली, "नम्रता ! भावुक न बनो—समय बड़े-बड़े घावों को भर देता है—आज की हठ यदि कल तुम्हारे जीवन में कोई दाग़ लगा दे तो—।"

"दाग़—! क्या मतलब ?" नम्रता उठ बैठी।

सास ने यह कहकर अनुमति दे दी कि स्वयं उसकी भी इच्छा थी वहू कुछ दिन के लिए मां के पास रह आए—लेकिन उसे क्या प था कि नम्रता को दिल्ली ले जाने से उनका क्या विशेष उद्देश्य —दूसरी ओर ब्रिज ने विष्णु से मिलकर बात पक्की कर ली थी वह निश्चित समय पर उन्हें रास्ते में मिले···वह उसे भी दिल साथ ले चलेंगे—और दिल्ली पहुंचकर नम्रता पर दबाव डाल उसकी शादी विष्णु से कर देंगे। इस दबाव वाली बात पर वि सहमत न हुआ था···फिर ब्रिज ने कहा था कि अगर नम्रता आप मान गई तो ठीक है—लेकिन विष्णु का दिल्ली जाना आवश्यक क्योंकि आपस का साथ शायद कोई निर्णय लेने में सहायक हो—

इधर वाली ने नम्रता को अनुरोध करके कुछ दिनों के लि दिल्ली चलने पर सहमत कर ही लिया···नम्रता तो न जाना चाह थी क्योंकि उसका मन कह रहा था कि मम्मी और भाभी वहां दूस शादी के लिए उस पर मिलकर दबाव डालेंगी···वह इसी असमंज में थी कि सास ने आकर स्वयं उसका प्रोग्राम बना दिया।

नम्रता ने सास की आंखों में देखा तो उन्होंने उसे अपनी बां में समेटते हुए कहा, "नम्मो बेटी ! कोई हानि नहीं—हो आओ— ···कोई मायके वालों से भी नाता तोड़ लेता है—और फिर आज कल तुम्हारा इंस्टीच्यूट भी बन्द है—।"

"मां जी—आप अकेली···।"

"मेरी चिन्ता न करो बेटी—अगर वहां जी न लगे तो वाप लौट आना···यह घर तो तुम्हारा है···इसके द्वार तो तुम्हारे लि सदा खुले हैं—।"

"मां जी—।" नम्रता का गला रुंध गया, "मैं नहीं जाऊंगी।"

"पगली—तू रोती क्यों है—तू जानती है कि तेरे आंसू मुझ नहीं देखे जाते।"

जाने कितनी देर तक सास और वहू एक-दूसरे के गले से लगं

को थाम लिया था···

नम्रता की आंखों से आंसू वह निकले—ज्योंही उसने दूसरा क़दम नीचे वाली सीढ़ी पर रखा तो उसे ऐसे अनुभव हुआ जैसे किसी ने उसका आंचल थाम रखा था—और नम्रता अनायास पीछे मुड़कर बोली, "कौन···?"

स्वीटी दादी के कन्धों के साथ लगा हुआ था और उसी ने उसका आंचल थाम रखा था—स्वीटी···बिलकुल आनन्द की तस्वीर—उसकी निशानी।

नम्रता ने जल्दी से मुंह मोड़ लिया और नीचे उतरने लगी··· सहसा किसी चीज के गिरने की आवाज आई—और नम्रता उल्टे पांव भागती हुई कमरे में जा पहुंची—सामने मेज पर धरी आनन्द की तस्वीर जमीन पर गिर पड़ी थी···शायद किसी बिल्ली या चूहे ने उसे चेतावनी दिलाई थी कि वह आनन्द को छोड़कर जा रही थी—नम्रता की सास स्वीटी को नीचे वाली को देकर अन्दर नम्रता को लेने आई तो नम्रता झुकी हुई शीशे के टुकड़े इकट्ठे कर रही थी।

"क्या हुआ बेटी···?"

"जी—।" नम्रता चौंकी···फिर धीरे-से बोली, "तस्वीर नीचे गिर पड़ी है उनकी।"

"तस्वीर—!" मां जी ने एक लम्बी सांस ली और बोली, "बेटी ···इसी तस्वीर की भांति कभी आनन्द की याद को दिल से न निकाल देना···।"

"मां जी—" शीशे का एक टुकड़ा नम्रता की उंगली में घुस गया और लाल लहू की धारा वह निकली—

मां जी ने झट अपने दोपट्टे को फाड़ा और नम्रता की उंगली पर पट्टी बांधते हुए कहा, "बेटी—ध्यान से—यह जीवन बहुत कठिन है इन्सान की ज़रा-सी भूल उसे दूसरों की दृष्टि से गिरा देती है—" —तभी बाहर से कार के हॉर्न बजने की आवाज सुनाई दी और

…े बोली, "चलो नम्मो बेटी—देर हो रही है।"

…नम्रता ने शीशे के टुकड़े मेज पर रखे और तस्वीर थामे वह अपनी …के साथ बाहर निकलने लगी तो सामने कार्नर पर दवाई की …। देखकर रुक गई। उसकी सास की दृष्टि भी वहीं पड़ी।

"मां की चारवी दवाई—।"

तभी बाहर से विज की आवाज आई, "जल्दी करो।"

"मैं पी लूंगी बेटी···।" मां जी ने कहा।

"अभी पी लीजिए···बाद भूल जाएंगी।"

"हां हां—मुझे आप तो समय का ध्यान ही नहीं रहता।" मां जी ने कहा। नम्रता गिलास उठाकर दवाई उड़ेलने लगी तो सास बोली, "…ने दे बेटी अभी।"

"नहीं मां जी! समय हो गया है···।"

"आज तो तू समय पर पिला देगी मगर···" सास की बात अधूरी … क्योंकि तभी सत्य बाली स्वीटी को उठाए अन्दर आई और …ी, "नम्रता! जल्दी करो—अरे! तुम्हारी उंगली पर क्या हुआ?"

"कुछ नहीं···शीशा लगा है—।" नम्रता ने संक्षिप्त सा उत्तर …या और बाहर की ओर बढ़ी।

बाहर कार के पास नम्रता की सहेली सुधा और उसका पति …था मुहल्ले की दो-तीन औरतें खड़ी थीं। नम्रता को देखते ही सुधा …के गले से लिपट गई, "मेरी अच्छी बहन! भगवान् तुम्हें सदा …सी रखे···।"

"नम्रता! कब आओगी···?" एक दूसरी औरत ने अपनी …दिल को अनुभव कराया।

"जल्द आओगी ना···!" तीसरी ने निरन्तर चलाया—नम्रता के …अतिरिक्त सभी लोग उस औरत की ओर देखने लगे और सोचने लगे …इस औरत के कहने यह बात कही है—नम्रता की आंखें सास की

ओर उठीं जिसकी आँखें डबडबा आई थीं।

"नम्रता ! माँ जी के पाँव छूओ।" ब्रिज ने कहा।

तभी बाली ने धीरे-से ब्रिज से कहा, "जल्दी कीजिए···वरना विष्णु चला जाएगा···।"

"विष्णु···" यह धीमी सी आवाज़ नम्रता के कानों में पहुंच गई—क्या विष्णु भी हमारे साथ जा रहा है···? लेकिन क्यों ?? क्या यह लोग पूरा प्रबन्ध करके जा रहे हैं···???

एकाएक नम्रता के हाथ में थमी आनन्द की तस्वीर बोल उठी, "तुम्हारे मन में मेरे प्यार की जोत केवल इस जन्म में भी नहीं जल सकी···तुम तो कहती थीं मैं एक जन्म क्या कई जन्म बलिदान कर दूंगी।"

नम्रता ने झुककर आनन्द की तस्वीर देखी—उसके थरथराते होंठ देखे—और वह कांप कर रह गई।

"चलो बैठो—काफ़ी देर हो गई है।" ब्रिज ने कार का दरवाज़ा खोला। बाली कार में बैठ चुकी थी।

जाने नम्रता के मन में क्या आया वह झट अपनी सास से लिपट गई और सिसकियां भरती हुई बोली, "माँ जी ! मुझे क्षमा कर दो—मैं आपको छोड़कर कहीं नहीं जा सकती—मैं कहीं नहीं जा सकती—मुझे अपने चरणों में रहने दीजिए···"

"नम्मो—!" माँ जी ने नम्रता को उठाया और गले से लगा लिया।

नम्रता ने डबडबाई आंखों से भैया और भाभी की ओर देखा और बोली, "आप लोग जाइए—मैं नहीं जा रही—मैं कहीं नहीं जाना चाहती···मेरा सामान अन्दर भिजवा दीजिए···।" उसकी भर्राई हुई आवाज़ में दृढ़ता थी···

फिर नम्रता सास को सहारा देकर अन्दर कमरे में ले आई।

दूसरे दिन स्थानीय अखबारों में बड़े शीर्षक से यह खबर छपी…

'आर्ट इंस्टीच्यूट के डायरेक्टर श्री विष्णु ने नींद की गोलियां अधिक संख्या में खाकर आत्महत्या कर ली है। आत्महत्या का कारण अभी ज्ञात नहीं हो सका केवल इतना मालूम हो सका है कि पिछले कुछ महीनों से वह बहुत परेशान थे…।'

और इस रहस्य को केवल नजमा जानती थी क्योंकि उसने एक प्यार को अमर करने के लिए दूसरे प्यार को ठुकरा दिया था।

□□

मुसाफिर का यह नया उपन्यास आपको कैसा लगा? इस सम्बन्ध में आपके अमूल्य विचारों की लेखक को प्रतीक्षा रहेगी—

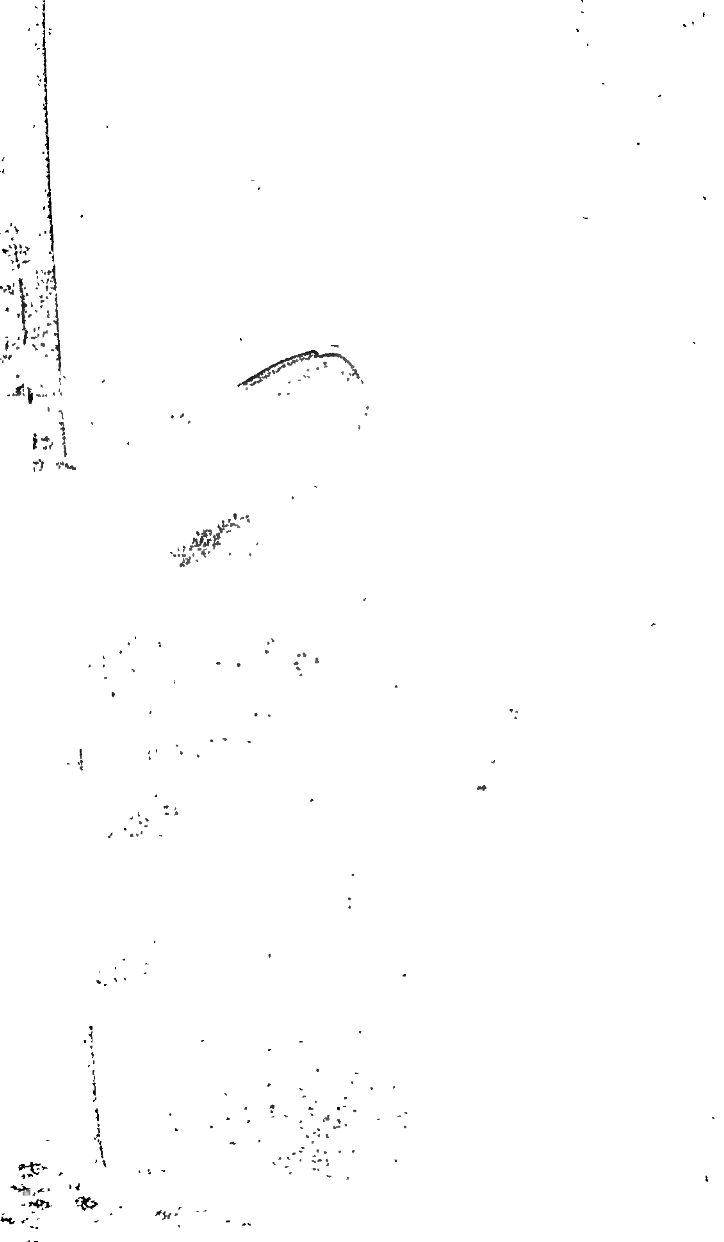
पता : मुसाफिर
34, Crowland Ave.
HAYES (Middx)
U B 3-4 J W
England

○बलिदान (समीर)
तलाश ,,
○वरदान ,,
○उमंग ,,
○लाडली ,,
आवारा ,,
चितचोर ,,
○आँख मिचोली ,,
बाबुल का आँगन ,,
○बहाना ,,
○निर्मोही (लोकदर्शी)
○घायल ,,
○दो किनारे ,,
○कोमल ,,
○एक भूल ,,
विवेक ,,
दीवाना ,,
अभिलाषा ,,
○झूठे सपने ,,
○मंजिल ,,
○खून के बदले में (गुप्तदूत)
○हत्या और हत्यारे ,,
○मुर्दों का षड्यन्त्र ,,
○औरत खतरा और मौत ,,
○तीसरा खूनी ,,
○चीखती रातें ,,
भयानक आवाजें ,,
मुहनरी लाशें ,,
○कदम कदम पर खतरा ,,
○हत्यारा प्रेमिकाओं का ,,
यह लाश किसकी है ,,
लहू के धब्बे ,,
○ चोरी की लाश ,,

○न्याय के हत्यारे (इं० गिरीश)
○अंधेरे का भूत ,,
○हत्या का वारंट ,,
○नमक हराम (आरिफ)
समझौता ,,

अन्य रोचक उपन्यास

खून का प्यासा (कुशवाहा कांत)
उसके साजन ,,
दानव देश ,,
२७ डाउन (रमेश बक्षी)
अकेला (यादव चन्द्र जैन)
○बादलों के पीछे (रमेश भारती)
○आग की लकीर (अमृता प्रीतम)
○उनकी कहानी ,,
अतीत की परछाईयाँ ,,
○चाकर गाथा (विमल मित्र)
○धून लगी बस्तियाँ (जयवन्त देहलवी)
○नींव का पत्थर ,,
○कलंक (शिवकुमार जोशी)
सुराग (राजदीप)
○असमर्थ की यात्रा (प्रि०गोपीचन्द)
○आखरी दाँव ,,
बदनाम गली (कमलेश्वर)
उलटे कदम (रवीन्द्र पाण्डे)
कौन पर्दा ढाके (कुन्दन)
चकोरी (विजयकुमार गुप्त)
रास्ते अपने-अपने ,,
○बेदाग
बीच का समय (रा[illegible] मित्र)
○वायलिन के स्वर [illegible] मित्र)
उड़े हुए रंग
(सर्वेश्वर[illegible])



आहुति

मुसाफ़िर



स्टार पॉकेट सीरीज

SH : 360

आहुति

प्रथम संस्करण : अप्रैल १९७६

प्रकाशक : स्टार पब्लिकेशंज (प्रा०) लि०,
आसफ अली रोड, नई दिल्ली-११०००२

मूल्य : तीन रुपये (३.००)

मुद्रक : अजय प्रिण्टर्स, शाहदरा, दिल्ली-११००३२

AAHAUTI : MUSAFIR : Rs. 3.00

पले मॉडलिंग के बाद कमर्शल आर्ट की क्लास थी।

नम्रता ने एक झटके के साथ गालों पर आई विद्रोही उदंड लटों को हटाया! काले नागिन जैसे कुन्तलों के छटने से उसका मुखड़ा यूँ निखर आया जैसे घने बादलों की ओट से पूनम का चाँद निकल आए।

नम्रता से थोड़ी दूर पर खड़ा राकेश एक निश्वास खींचकर रह गया।—राकेश के लिए यह हरकत नई नहीं थी। इस अद्भुत सौन्दर्य को सदैव चोर दृष्टि से निहारते रहना उसकी प्रकृति मे सम्मिलित हो गया था···इस समय उसे यूँ अनुभव होता जैसे उसके दिल मे धधकती आग पर जल के छींटे दिए जा रहे हों···एक आनन्द शीतलता से वह विभोर हो उठता।

यदि बात केवल राकेश तक ही सीमित रहती तो नम्रता शायद अहम्मन्यता का भास न होता किन्तु यहाँ तो सारा का विभाग नम्रता के अद्वितीय सौन्दर्य पर मर मिटा था···जिधर उसकी चर्चा, जहाँ जाओ वहीं दृष्टि का केन्द्र···इन्हीं बातों से न को ऐसा मान हो गया था कि उस जैसी सौन्दर्य की मूर्ति का विभाग में थी ही नहीं।

···रे लड़के कक्षा से बाहर जा चुके थे लेकिन नम्रता ··· मॉडल में प्राण डाल रही थी। राकेश ··· के पास आया और एक दीर्घ साँस लेकर ··· चुकी है।"

···स्या ··· है- ···म्यत

"हूँ···।" नम्रता ने बिना राकेश की ओर देखे कहा।

"मिट्टी की मूर्तों में प्राण डालना कोई आप से सीखे।" रा ने मस्का लगाया। नम्रता की नज़रें मिट्टी के माडल पर ही रहीं।

"एक कलाकार की मृत्यु तब होती है जब वह···"

अभी राकेश वाक्य पूरा भी न कर पाया था कि नम्रता ने श की-सी मस्त आंखों को ऊपर उठाया और बहुत धीमे स्वर में बो "और जीवन···?"

नम्रता का वाक्य अपूर्ण था लेकिन राकेश ठहरा सीधा-स इन्सान, वह अपनी बात में मस्त था इसलिए उसने अपना ही पूरा किया, "अपनी कला में निपुणता प्राप्त कर ले और फि इस बात की अनुभूति भी हो—"

यह कहकर नम्रता पर अपनी बात की प्रतिक्रिया जानने के वह क्षण भर के लिए रुका। अब की बार उसकी बात नहीं क लेकिन ऐसे लग रहा था कि नम्रता अभी उससे लड़ पड़ेगी। ने झट अपनी निगाहें नम्रता के मुख से हटाईं और उसके मॉ ओर देखता हुआ बोला, "नम्रता जी! शायद आपको मेरी बनावट नज़र आ रही है—लेकिन मैं सच कह रहा हूँ अग स्टडी में यूं ही तन्मय रहीं तो—।" राकेश क्षण भर के लि का।

नम्रता के लिए यह क्षण बहुत था। उसने गम्भीरता से ओर देखा और बोली, "तो—?"

"तो···" राकेश ने घबरा कर नम्रता से दृष्टि मिलाई और फिर बोला, "तो शायद लोग भगवान् के रते के स्थान पर आपकी कला कृति की पूजा आ

"मिस्टर राकेश! आपको भूल जाने की भी आदत है

"जी—!" राकेश ने आश्चर्य के साथ नम्रता की ओ

हाँ—प्रश्न कलाकार के जीवन और मृत्यु का था।"
वह प्रश्न तो तब उठेगा जब आप कला के सृजन पर अहंकार
।"
हूँ—मिस्टर राकेश ! अगर आप कहानियाँ लिखना आरम्भ
तो अवश्य ही आप एक बहुत बड़े कहानीकार बन सकते हैं—
—।"
लेकिन क्या—?" राकेश ने बड़ी अधीरता से पूछा।
आप केवल लड़कियों से बात करने के लिए कहानियाँ घड़ते

क्या यह भी कला नहीं…?" राकेश ने ढिठाई से कहा।
लेकिन" यह जादू हर एक पर नहीं चल सकता।" नम्रता ने
दिया।
यही कारण है कि मैं आपसे बहुत-कुछ कहना चाहता हूँ—
…।"
ाकेश वाक्य पूरा न कर पाया था कि नम्रता ने बात काट दी
ोली, "लेकिन आप कुछ न कहें तो बेहतर होगा।" यह कह-
म्रता बाथ-रूम की ओर बढ़ गई और राकेश एक ठण्डी आह
र स्टुडियो से बाहर आ गया।
ीवास्तव ने एक उड़ती सी दृष्टि क्लास पर डाली और फिर अपने
को ढीला छोड़कर अपनी कल्पना की दुनिया में खो गए…
क राकेश ने उन्हें फिर कल्पना-लोक से धरती पर खींच लिया,
-! पोस्टर पर काल्पनिक ध्वनि बनाने से बेहतर है कि किसी
को कुछ दिनों के लिए ऐंगेज कर लिया जाए।"
हूँ—" श्रीवास्तव ने राकेश की ओर देखा, फिर अपने स्थान
र उसके ईजल के पास आकर बोले, "यह हिन्दोस्तान है—
मी जिन्दा कैरेक्टर की काल्पनिक तस्वीर बनाना भी सभ्यता
द्ध है और तुम किसी को मॉडल बनाना चाहते हो—।"
तव के स्वर में उदासी थी।

"सर ! मैं एक बात आपसे पूछना चाहता हूँ, अगर आप अनु-मति दें तो।"

"अनुमति की क्या बात है—?" श्रीवास्तव ने एक दृष्टि ईज़ल पर रखे कैनवस पर डालते हुए उत्तर दिया और अपने विचारों में खोया सा चारकोल उठाकर कैनवस पर टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ लगाने लगा—सभी लड़के-लड़कियाँ अपने काम में व्यस्त थे…राकेश के पास नम्रता का ईज़ल था और वह भी अपनी पेंटिंग में मग्न थी।

"प्रश्न शायद आपके निजी जीवन के बारे में हो …" राकेश ने अपने प्रश्न को रहस्यमयी बनाते हुए कहा।

"शायद क्यों—?" श्रीवास्तव की टेढ़ी मेढ़ी रेखाएं एक जाने पहचाने चेहरे को जन्म दे रही थीं। अब तो राकेश भी कैनवस पर उभरती छवि को देख रहा था—बिल्कुल वही—वही आकृति—वही नयन नक्श—

"प्राय किसी और के जीवन की परछाइयाँ इन्सान पर इतना गहरा प्रभाव छोड़ जाती हैं कि मन लाख यत्न करे उससे दूर भाग ही नहीं सकता—।" यह कहकर राकेश ने नम्रता की ओर देखा—नम्रता को भी इस बात का अनुभव तो हुआ लेकिन उसने दृष्टि अपने कैनवस से नहीं हटाई…इस समय वह राकेश से बातें नहीं करना चाहती थी। श्रीवास्तव चुपचाप ध्यान मग्न कैनवस पर अतीत के एक धुंधले पात्र को जन्म दे रहा था…और यही चित्र राकेश को व्याकुल बना रहा था। उसे विश्वास था कि श्रीवास्तव के जीवन के साथ एक कहानी जुड़ी है जो आज भी उसे बेचैन रखती है—शायद कोई खोया हुआ प्रेम…और इसी कहानी को—इसी रहस्य को जानने के लिए राकेश ने कई बार उसे कुरेदना चाहा लेकिन वह आगे न बढ़ सका यद्यपि प्रोफेसर श्रीवास्तव से वह दोस्तों की तरह बातचीत करता था।

राकेश अब भी असमंजस में था और मन-ही-मन उससे कुछ पूछने के लिए साहस बटोर रहा था। श्रीवास्तव ने एक बार राकेश

को देखा और फिर कैनवस पर बनाए चित्र को सँवारते हुए धीरे से बोला, "राकेश ! अब तुम्हारा मौन मुझे उलझन में डाल रहा है।" लगता था प्रोफ़ेसर ने राकेश के भावों को उसके चेहरे से पढ़ लिया था।

"जी—!" राकेश चौंका।

"क्या पूछना चाहते हो ?"

"आप प्रायः उदासी के गहरे समुद्र में डूबे रहते हैं—कालिज के दूसरे प्रोफ़ेसरों से अलग-अलग रहते हैं—और—" यहाँ पहुँचकर राकेश क्षण भर के लिए रुका।

"और क्या ?" श्रीवास्तव ने राकेश की ओर देखते हुए पूछा।

"और जब भी आप कोई चित्र बनाते हैं तो उसकी आकृति··· उसके नक्श जाने पहचाने और एक से क्यों होते हैं ? मैंने कई बार इस रहस्य को जानने का प्रयत्न किया लेकिन आपसे पूछने का साहस नहीं कर पाया—" राकेश ने आखिर मन की बात कह ही दी।

नम्रता बड़े ध्यान से राकेश की बात सुन रही थी···उसने भी श्रीवास्तव को प्राय विचारों की दुनिया में डूबे और खोए देखा था। श्रीवास्तव के मुंह से कुछ सुनने के लिए वह भी उत्सुक थी लेकिन उसकी दृष्टि निरन्तर अपने ही कैनवस पर जमी रही।

श्रीवास्तव की उदासी और गहरी हो गई। उसने एक लम्बी साँस ली और कहा, "राकेश—! किसी विश्वास को लेकर तुमने मुझसे एक निजी बात पूछी है···मैं तुम्हारे विश्वास को ठेस न लगने दूंगा—आज शाम को किसी रैस्टोरेंट में चलेंगे।" यह कहकर श्रीवास्तव ने चारकोल स्टूल पर रखा और एक दृष्टि कैनवस पर डाल कर नम्रता के ईज़ल की ओर बढ़ गया।

क्लास समाप्त होने के बाद नम्रता ने अपना सामान बैग में डाला और चुपचाप बाहर निकल आई—अभी वह सीढ़ियाँ उतर ही रही थी कि सुधा ने उसे पीछे से पा लिया और साथ चलती हुई बोली, "क्या बात है आज अकेली ही चल पड़ी ?"

"यूंही—।"

"आज प्रोफ़ेसर और राकेश आपस में क्या बातें कर रहे थे ?"

"यह तुम राकेश से पूछ सकती हो—।" नम्रता ने रूखा-सा उत्तर दिया। उसके स्वर में व्यंग भी था जिसे सुधा न समझ सकी।

"तुम्हारा राकेश के बारे में क्या विचार है ?" सुधा ने एक सीधा और साधारण प्रश्न किया।

नम्रता कुछ चिढ़-सी गई और झुंझलाकर बोली, "सुधा ! तुम्हें किसी फिल्म इन्स्टिट्यूट में ट्रेनिंग लेनी चाहिए थी—तुम यहाँ आर्ट कालिज में कैसे फँस गई ?"

"क्या मतलब ?" सुधा ने उसके और निकट होते हुए पूछा।

"मतलब—तुम अपने दिल से पूछ सकती हो—लेकिन यह याद [illegible] आखिर नम्रता

"हूँ—मगर क्यों ?"

"सुधा ! तुम आर्ट की स्टूडेंट हो···तुम्हें इस शब्द 'क्यों' का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अपने दिमाग से इस क्यों का उत्तर माँगना···।"

नम्रता अभी अपना वाक्य पूरा भी न कर पाई थी कि एक कार बिल्कुल उसके पास आकर रुकी—

"नम्रता···!"

"जी—!" नम्रता आगे बढ़ती हुई बोली। कार की खिड़की से सिर निकाले वाली उसे पुकार रही थी। नम्रता ने झट खिड़की के पास जाकर मुस्कराते हुए कहा, "भाभी !"

"फिर भाभी—।"

"सॉरी—अकेली कहाँ जा रही है—? भैया कहाँ हैं ?"

"वही तो मैं तुमसे पूछना चाहती हूँ—आज कालिज भी नहीं आए।"

"आपसे डरकर नहीं आए होंगे।"

"अाँ—ख़ैर आओ चलें।"

"मेरे साथ—।" नम्रता ने कहना चाहा लेकिन फिर वह दूसरे ही क्षण सुधा से सम्बोधित हुई, "आओ सुधा···!"

"कहाँ—?" सुधा ने पूछा।

"जहाँ यह ले चलें—" नम्रता ने वाली की ओर संकेत करते हुए कहा।

कार एक झटके के साथ आगे बढ़ी। खुली सुरमई रंग की सड़क पर लाल रंग की कार तेज भागने लगी तो नम्रता बोली, "सुधा—यह हैं वाली देवी—मेरी होने वाली भाभी—और भाभी साहिबा, यह हैं मिस सुधा मेरी क्लास फ़ैलो—" नम्रता ने दोनों का एक दूसरे से परिचय कराते हुए कहा।

कार में थोड़ी देर मौन छाया रहा···फिर इस मौन को भंग करते हुए वाली बोली, "तुम्हारी स्टडी का क्या हाल है ?"

"यूंही—।"

"आज प्रोफ़ेसर और राकेश आपस में क्या बातें कर रहे थे ?"

"यह तुम राकेश से पूछ सकती हो—।" नम्रता ने रूखा-सा उत्तर दिया। उसके स्वर में व्यंग भी था जिसे सुधा न समझ सकी।

"तुम्हारा राकेश के बारे में क्या विचार है ?" सुधा ने एक सीधा और साधारण प्रश्न किया।

नम्रता कुछ चिढ़-सी गई और झुंझलाकर बोली, "सुधा ! तुम्हें किसी फिल्म इन्स्टिट्यूट में ट्रेनिंग लेनी चाहिए थी—तुम यहां आर्ट कालिज में कैसे फंस गईं ?"

"क्या मतलब ?" सुधा ने उसके और निकट होते हुए पूछा।

"मतलब—तुम अपने दिल से पूछ सकती हो—लेकिन यह याद रखो राकेश तुम्हारे साथ कभी वफ़ा नहीं करेगा।" आखिर नम्रता ने सुधा के दिल की बात कह ही दी।

"वह क्यों ?" सुधा विवाद के मूड में थी।

"राकेश बहता हुआ पानी है—वह हर एक से प्रेम व्यक्त करता है—और मेरे विचार में कई लड़कियों से कर चुका है।"

"क्या तुम से भी—?" सुधा ने चिढ़कर पूछा।

"वह मुझसे प्रेम जताने का साहस नहीं कर सकता क्योंकि मैंने इसे कभी लिफ्ट नहीं दी—वैसे मैं मर्दों की नजरों को जल्दी पहचान लेती हूं।"

"अनुभव की बात है—" सुधा ने चोट करते हुए कहा।

"खैर—कला सीखने के लिए इन्सान का दिमाग़ व्यस्क होना चाहिए।" नम्रता ने धीरे-से उत्तर दिया।

दोनों बातें करती हुई बस स्टैण्ड पर 'क्यू' में खड़ी हो गईं। अभी उन्हें खड़े हुए कोई पांच ही मिनट हुए थे कि प्रोफ़ेसर श्रीवास्तव और राकेश सामने के रैस्टोरेंट में जाते दिखाई दिए।

"यह कहां जा रहे हैं ?" सुधा से पूछे बिना नहीं रहा गया।

"स्पष्ट है कि रैस्टोरेंट में जा रहे हैं।"

"हूँ—मगर क्यों ?"

"सुधा ! तुम आर्ट की स्टूडेंट हो···तुम्हें इस शब्द 'क्यों' का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अपने दिमाग से इस क्यों का उत्तर माँगना···।"

नम्रता अभी अपना वाक्य पूरा भी न कर पाई थी कि एक कार बिल्कुल उसके पास आकर रुकी—

"नम्रता···!"

"जी—!" नम्रता आगे बढ़ती हुई बोली। कार की खिड़की से सिर निकाले वाली उसे पुकार रही थी। नम्रता ने झट खिड़की के पास आकर मुस्कराते हुए कहा, "भाभी !"

"फिर भाभी—!"

"सॉरी—अकेली कहाँ जा रही है—? भैया कहाँ हैं ?"

"यही तो मैं तुमसे पूछना चाहती हूँ—आज कालिज भी नहीं आए।"

"आपसे डरकर नहीं आए होंगे।"

"मां—खैर आओ चलें।"

"मेरे साथ—।" नम्रता ने कहना चाहा लेकिन फिर वह दूसरे ही क्षण सुधा से सम्बोधित हुई, "आओ सुधा···!"

"कहाँ—?" सुधा ने पूछा।

. "जहाँ यह ले चलें—" नम्रता ने वाली की ओर संकेत करते हुए कहा।

कार एक झटके के साथ आगे बढ़ी। खुली सुर्मयी रंग की सड़क पर लाल रंग की कार तेज भागने लगी तो नम्रता बोली, "सुधा—यह हैं वाली देवी—मेरी होने वाली भाभी—और भाभी साहिबा, यह हैं मिस सुधा मेरी क्लास फैलो—" नम्रता ने दोनों का एक दूसरे से परिचय कराते हुए कहा।

कार में थोड़ी देर मौन छाया रहा···फिर इस मौन को भंग करते हुए वाली बोली, "तुम्हारी स्टडी का क्या हाल है ?"

"ठीक चल रही है—।" नम्रता ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया।"
"अपनी क्लास में यह टाप पर है—" सुधा बीच में बोल उठी।
"ऐसा…!" बाली ने भोली अदा से कहा।
"नहीं भाभी—!"
"फिर भाभी—?"
"आखिर आपको 'भाभी' शब्द से चिढ क्यों है? एक दिन तो आप दुल्हन बनकर हमारे घर आएँगी।" नम्रता ने बहस करना चाहो।
"तुम्हारा क्या विचार है कि मैं तुम्हारे भैया से शादी करूंगी?"
"नहीं—आप तो केवल 'इश्क' ही करेंगीं।"
"विचार तो यही था लेकिन तुम्हारे भैया 'रोमियो' सिद्ध हुए हैं।"
"तो—आप हार मानती हैं।"
"नहीं—" बाली ने कार 'लार्ड' के आगे रोक दी।
"क्या चाय पीने का विचार है?" नम्रता ने पूछा।
"हाँ—लेकिन चाय से अधिक—।" बाली कुछ कहना चाहती थी।
"शायद भैया से मिलने की सम्भावना हो—" नम्रता मुस्कराती हुई बोल उठी।
"बहन-भाई दोनों एक जैसे हो—" बाली मुस्कराती हुई कार का दरवाजा खोलकर बाहर निकल आई। नम्रता और सुधा भी दूसरे दरवाज़े से बाहर निकलीं और कार लॉक करने के बाद तीनों 'लार्ड' में घुस गईं।

बाली दोनों को साथ लेकर अपने विशेष मेज़ की ओर बढ़ गई। यहाँ वह प्रायः नम्रता के भाई ब्रिज के साथ बैठा करती थी। इस समय भी वह यहाँ इसी उद्देश्य से आई थी कि शायद ब्रिज से भेंट हो जाए —जिस दिन इन दोनों में से कोई कालिज न आता तो शाम को 'लार्ड' में ज़रूर आ जाता था।

"डाक्टरी पढ़ रहे हैं—इस वर्ष फ़ाईनल परीक्षा में बैठेंगे।"

"तुम्हारी भाभी बड़ी सुन्दर और सुलझी हुई हैं।"

"मेरे भैया भी लाखों में एक हैं।" नम्रता ने अपने भाई का पक्ष लेते हुए कहा।

"सच—।" सुधा ने लम्बी आवाज़ में कहा। नम्रता ने ध्यान-पूर्वक सुधा की ओर देखा और बोली, "लेकिन तुम्हारे राकेश से बढ़कर नहीं।"

"फिर वही मुर्गे की एक टांग!"

"अरी…नाराज़ हो रही है—वह देख बस आ रही है।"

दोनों सहेलियाँ भविष्य के सुन्दर सपने लेकर बिछुड़ गईं—दोनों को अलग-अलग बसें पकड़नी थीं—।



खाने की मेज़ पर सभी उपस्थित थे।

खाने के बीच ब्रिज ने धीरे-से कहा, "पिताजी—!"

"हूँ—।" ब्रिज के पिता लक्ष्मणदास चौंके।

"परसों हमारे कालिज में छुट्टियां हो रही हैं।"

"फिर—।" लक्ष्मणदास खाना खाते हुए बोले, "इन छुट्टियों में…"

ब्रिज अभी कुछ कहना ही चाहता था कि नम्रता बोल उठी, "भैया किसी हिल स्टेशन पर जाना चाहते हैं।"

"तुम्हें कैसे मालूम हुआ?" ब्रिज ने नम्रता की ओर देखकर पूछा।

"नहीं बतलाते—अपना ज्योतिष…।" नम्रता अकड़ गई।

"न बतलाओ—मैं कोई तुम्हारे पांव पड़ रहा हूँ।" ब्रिज ने घूरकर कहा।

"अभी पांव भी पड़ोगे—अगर मैंने यह कहा कि आप शिमला जाना चाहते हैं।"

"नम्मो…!" ब्रिज ने घूरकर नम्रता की ओर देखा।

"अरे, इसमें झगड़ने की क्या बात है—?" नम्रता की माँ जो अभी तक चुप बैठी थी अपनी बेटी का पक्ष लेती हुई बोली।

"मम्मी! आप भैया से पूछिए···यह शिमला ही क्यों जाना चाहते हैं?" नम्रता ने अंगूठा दिखाते हुए कहा।

"क्यों बेटा! यह शिमला की क्या बात है—!" इस बार लक्ष्मणदास जी बोले।

"पिताजी—।" ब्रिज ने गला साफ किया लेकिन कहने का उसे साहस न हुआ।

नम्रता झट बोली, "मैं बताऊँ पिताजी—।"

"बोलो—।"

तभी ब्रिज ने मेज़ के नीचे से अपना पैर नम्रता के पाँव पर रख दिया और नम्रता चिल्ला उठी, "ऊई···।"

"क्या बात है बेटी?"

"भैया घूस के बदले दण्ड दे रहे हैं।"

"हूँ—! तो तुम दोनों ने मिलकर प्रोग्राम बनाया है?"

"नहीं पिताजी—मैं···।"

ब्रिज कुछ कहना चाहता था कि नम्रता बोली, "पिताजी! भैया मुझे अपने साथ नहीं ले जाना चाहते—।"

"क्यों रे—?" माँ ने ब्रिज से पूछा।

"मम्मी! मेरे साथ कालिज के साथी जा रहे हैं।"

"झूठ—आपके साथ···।"

"अच्छा भई ले चलूँगा।" ब्रिज ने हथियार डाल दिया।

लक्ष्मणदास मुस्कराकर बोले, "तुम लोगों के कहने से पहले ही बाली के डैडी ने फोन पर मुझे शिमला आने का निमन्त्रण दे रखा है।"

"क्या···?" दोनों बहन-भाई ने लम्बी आवाज़ में एक साथ कहा।

लक्ष्मणदास और उनकी पत्नी दोनों मुस्करा पड़े···पास खड़ा

नौकर भी हंसने लगा।

"अबे ! तू क्यों हँसता है ?" ब्रिज नें नौकर से पूछा।

"अब नहीं हँसूंगा सरकार।" नौकर ने दाँतों तले उँगली देकर अजीब-सा मुंह बनाया कि खाने की मेज़ पर ठहाकों की बारिश होने लगी।

खाने की मेज़ पर से उठते समय लक्ष्मणदास ने ब्रिज को अपने कमरे में आने के लिए कहा और ब्रिज सिर हिलाकर रह गया।

दो

आज कालिज में पढ़ाई का अन्तिम दिन था क्योंकि कल से गर्मियों की छुट्टियाँ हो रही थीं। नम्रता आज जल्दी ही कालिज के लिए तैयार हो गई। जब वह कालिज में पहुंची तो क्लासें आरम्भ होने में अभी तीस मिनट शेष थे।

नम्रता अपने ध्यान में फूलों के कुंज की ओर बढ़ गई···उसे इस बात का ज्ञान नहीं था कि वहीं राकेश बैठा टकटकी लगाये उसकी ओर देखे जा रहा था। इस बात का अनुभव उसे वहाँ पहुँचकर ह हुआ। वह वापसी के लिए मुड़ी ही थी कि राकेश बोला, "एक कल कार को एक इन्सान से इतनी घृणा करनी अच्छी नहीं होती।"

"घृणा···!" नम्रता ने क्षण-भर के लिए सोचा फिर धीरे बोली, "आपसे यह किसने कहा कि मैं आपसे घृणा करती हूँ।"

"फिर आप आई भी और चल भी दीं।"

"हूँ—।" नम्रता के पास कोई उत्तर नहीं था इसलिए वह वे बड़बड़ा कर रह गई—फिर अचानक कुछ सोचकर बोली, ' आपको श्रीवास्तव अपने साथ ले गये थे।"

"हाँ—।" राकेश ने एक गहरी सांस ली और शून्य में लगा।

आ

"क्या बात थी ?" न जाने नम्रता यह क्यों पूछ बैठी।

'आप यहाँ बैठ जाइये…।" राकेश ने कहा।

"लेकिन—।"

नम्रता ने कुछ कहना चाहा कि राकेश बोला, "मैं इन्सान हूँ, जानवर नहीं—आप निश्चिन्त रहिए…मैं आपको कोई शिकायत का अवसर नहीं दूँगा—कलाकार को दुनिया की बातों की परवाह नहीं होनी चाहिए…मेरा आपका सम्बन्ध कलाकार के नाते से बहुत ऊँचा है—इतना ऊँचा जितनी ऊँची एक कलाकार की कल्पना हो सकती है।"

"वह तो ठीक है मगर—।"

"फिर मगर—आप विराजिए…मैं आपको श्रीवास्तव साहब के जीवन का वह पहलू बतलाता हूँ जो हम लोगों से आज तक छुपा रहा है।"

"क्या यह उनका कोई भेद नहीं ?"

"भेद—हम नई पौद के कलाकार हैं—हमें भेद या रहस्य जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।"

"फिर श्रीवास्तव साहब ने आज तक इस भेद को उगला क्यों नहीं ?" नम्रता वहीं राकेश के पास बैठते हुए बोली।

"वह आज तक इस बात से डरते रहे हैं कि कहीं भेद उगल देने से अपना सम्मान न खो बैठें—लेकिन…।" राकेश क्षण-भर के लिए रुका।

"लेकिन क्या…?"

"मैं ऐसा नहीं समझता—हम लोग जवान हैं…हम में आत्म-विश्वास है हमारे दृष्टिकोण दृढ़ हैं।"

"हूँ—।" नम्रता ने बेध्यानी में सूखे घास का एक तिनका उठा-कर दाँतों के नीचे दबा लिया।

राकेश ने गला साफ करके कहा, "इसी कालिज में आज से बीस वर्ष पहले श्रीवास्तव एक स्टूडेण्ट था और मिस गंगोली थी मॉडलिंग

की प्रोफ़ेसर थी—।"

"फिर—।" नम्रता ने आगे पूछा।

"श्रीवास्तव को मिस गंगोली से प्यार हो गया था और इसी उन्होंने आजतक शादी नहीं की है।"

"क्या—?" नम्रता ने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ—कितने आश्चर्य की बात थी कि एक स्टूडैण्ट को अ प्रोफ़ेसर से प्रेम हो गया—अभागे दिल की बात है ना…।" राकेश कहानी को लम्बा करना चाहा।

"मिस्टर राकेश ! कहानी के टैम्पो को धीमा मत करो—सं से काम लो।" नम्रता ने टोका।

"यह कहानी नहीं वास्तविकता है।" राकेश ने नाटकीय ढंग कहा—फिर नम्रता की ओर देखकर बोला, "एक दिन जब श्रीवा स्टूडियो में काम कर रहा था तो बेख्याली में उसने एक चित्र बन उस चित्र के नक्श बिल्कुल मिस गंगोली से मिलते-जुलते थे। समय अचानक मिस गंगोली किसी काम से स्टूडियो में आई अ खाली कमरे में केवल श्रीवास्तव को काम करते देखकर उसके आ गई। श्रीवास्तव चित्र बनाने में मग्न था—उसे मिस गंगोली आने का बिल्कुल ज्ञान न हुआ। मिस गंगोली अपनी तस्वीर को दे कर एकाएक चौंक पड़ी…तभी श्रीवास्तव को अनुभव हुआ कि चित्र वह बना रहा था उसके नयन नक्श मिस गंगोली ही के अपनी इस हरकत पर लज्जित हुआ वह अपनी सीट से उठकर हो गया। मिस गंगोली को भी शायद पहले इस बात का एहसास चुका था कि श्रीवास्तव प्रायः उसके विचारों में खोया रहता है लेकिन उन दोनों के बीच शिक्षक और विद्यार्थी के सम्बन्ध के रिक्त आयु का भी भारी अन्तर था। वह श्रीवास्तव से लगभग वर्ष बड़ी थी—उसको चूंकि शादी से घृणा थी इसलिए उसने तक शादी नहीं की थी—ख़ैर—अपनी घबराहट छुपाने के लिए मि गंगोली वापस जाने के लिए मुड़ी कि श्रीवास्तव ने आगे बढ़कर मि

ली का रास्ता रोक लिया और बोला।—
"यह भूल अनजाने में ज़रूर हुई है···लेकिन···।"
"लेकिन क्या···?" मिस गंगोली भी अनायास पूछ बैठी।
"प्रायः यह हो जाती है।" श्रीवास्तव ने दिल की बात होंठों पर
ही दी।
"लेकिन क्यों?" मिस गंगोली ने अपना मान बनाए रखना
।
"आपसे एक बात पूछूँ?"
"पूछो—।"
"आप इस चित्र को देखकर यहाँ से क्यों भाग जाना चाहती
?"
श्रीवास्तव के स्वर में कुछ घनिष्ठता आ गई थी जिसे मिस
ली ने अनुभव किया और बड़ी गम्भीरता से बोली, "श्रीवास्तव!
यहाँ पढ़ने के लिए आए हो—और इस समय अपनी प्रोफ़ेसर से
कर रहे हो—तुम्हें शिष्टता और सभ्यता का ध्यान रखना
हिए।"
"मैं केवल अपने प्रश्न का उत्तर चाहता हूँ।"
"मैं ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने के लिए यहाँ नहीं आई हूँ।"
"अगर कोई आपको विवश करे तो—।"
"लेकिन मैं अपने आपको विवश नहीं समझती—।"
"वह केवल इसलिए कि आप प्रोफ़ेसर हैं···लेकिन आप प्रोफ़ेसर
अलावा इन्सान भी हैं।"
"श्रीवास्तव! जिस मार्ग पर तुम चलने का प्रयत्न कर रहे हो
एक दिन तुम्हें विनाश की ओर ले जाएगा।"
"लेकिन यह मार्ग तो आप ही मुझे दिखा रही हैं—।" श्रीवास्तव
कहा।
"हूँ—अगर मैं कालिज छोड़कर चली जाऊँ।"
"आप ऐसा नहीं कर सकती।" श्रीवास्तव चिल्लाया। उसे मिस

गंगोली से ऐसे उत्तर की बिल्कुल आशा नहीं थी।

"श्रीवास्तव ! मैंने एक अध्यापिका की दृष्टि से तुम्हें देखा और परखा है—मुझे विश्वास है कि अगर तुम लग्न से परिश्रम करो तो एक दिन महान् चित्रकार बन सकते हो।"

"लेकिन मैं एक इन्सान भी हूँ और इन्सान प्रायः मन के हाथों विवश हो जाता है।"

"श्रीवास्तव ! सीमा को उलांघने का प्रयत्न न करो—तुम मेरे स्टूडेण्ट हो···अर्थात् मेरे बच्चे हो—" और फिर मिस गंगोली आगे कुछ न कह सकी। वहाँ से वह भाग गई।

दूसरे दिन श्रीवास्तव को मालूम हुआ कि मिस गंगोली ने उस कालिज से बदली करवा ली है···पहले तो उसे पता न चल सका कि वह कहाँ गई है और जब इसका किसी प्रकार उसे ज्ञान हो गया तो फिर उसे सूचना मिली कि मिस गंगोली ने नौकरी ही छोड़ दी है—राकेश थोड़ी देर के लिए तो रुका।

नम्रता बिल्कुल मौन खड़ी यह कहानी सुन रही थी···राकेश के चुप होते ही उसने धीरे-से पूछा, "इसी कारण से श्रीवास्तव ने शादी नहीं की।"

"नहीं—।" राकेश ने शून्य में घूरते हुए कहा।

"नहीं !" नम्रता के स्वर से आश्चर्य झलकता था।

"हाँ—क्योंकि मिस गंगोली वास्तव में श्रीवास्तव से प्यार करती थी लेकिन वह इसे व्यक्त न कर सकती थी।"

"लेकिन इसका ज्ञान कैसे हुआ ?" नम्रता ने पूछा।

"कई वर्ष बीत गए" राकेश ने कहानी चालू रखते हुए कहना आरम्भ किया, "श्रीवास्तव परीक्षा पास करके इसी कालिज में प्रोफ़ेसर लग गया कि अचानक एक दिन श्रीवास्तव को मिस गंगोली की चिट्ठी मिली जिसमें केवल इतना ही लिखा हुआ था कि वह बीमार है—चिट्ठी में उसका पता भी लिखा था। श्रीवास्तव ने उसी समय कालिज से छुट्टी ली और मिस गंगोली को देखने के लिए रवाना हो गया···

किन्तु—यहाँ आकर राकेश चुप हो गया जैसे घटनाओं की अन्तिम कड़ियाँ जोड़ रहा हो।

"किन्तु क्या···?" नम्रता कहानी में इतनी खो गई थी कि उसे इस बात का भी ध्यान न रहा कि कालिज में क्लासें आरम्भ हो गई हैं।

"जब श्रीवास्तव मिस गंगोली के घर पहुँचा उस समय मिस गंगोली को यमराज ने अपने हाथों में जकड़ लिया था—वह अपने कमरे में अकेली ही रहती थी। उसकी लाश पर चादर डालने के बाद श्रीवास्तव की नजर मेज पर बिखरी हुई चिट्ठियों पर गई। उनमें से कुछ चिट्ठियों पर श्रीवास्तव का पता लिखा था और कुछ पर मिस गंगोली का अपना पता। श्रीवास्तव ने आश्चर्य के साथ अपने पते वाली चिट्ठियाँ उठाईं···चिट्ठियाँ लिफाफों में बन्द थीं और मिस गंगोली के अपने ही हाथों की लिखी थीं। श्रीवास्तव ज्यों-ज्यों इन चिट्ठियों को पढ़ता गया उसकी आँखें आश्चर्य से फैलती गईं। सब पत्रों में प्रेम और प्यार की बातें थीं···अपना बनाने के वचन थे···शेर व शायरी थी।—फिर श्रीवास्तव ने वह लिफ़ाफ़े उठाए जो मिस गंगोली के नाम थे—उन लिफाफ़ों में श्रीवास्तव की ओर से मिस गंगोली ही के हाथों लिखे प्रेम-पत्र थे। अभिप्राय यह कि वह स्वयं ही श्रीवास्तव को पत्र लिखती (जो उसे कभी पोस्ट न किए जाते) और स्वयं ही उन पत्रों के उत्तर देती। सभी चिट्ठियाँ पढ़ने के बाद श्रीवास्तव की आँखों में आँसू छलक आए और—और मिस गंगोली का अन्तिम संस्कार करने के बाद उसने मिस गंगोली की चिता को वचन दिया कि वह जीवन-भर शादी नहीं करेगा।"

राकेश जब खामोश हुआ तो उसके चेहरे पर पसीने की बूँदें चमक रही थीं और नम्रता भी मौन गुमसुम-सी बैठी यह दुःख-भरी कहानी सुन रही थी। दोनों निस्तब्धता के गहरे सागर में लगभग डूबे हुए थे कि किसी ने उनके पास आकर उन्हें झंझोड़ दिया। नम्रता ने मुड़

"तुम्हें सब जगह ढूँढा पर तुम [illegible] और इस कुंज में छुपी बैठी हो।"

नम्रता सुधा की बात का उत्तर न दे सकी। राकेश चुपचाप उठकर एक ओर चला गया। सुधा ने नम्रता को पकड़कर उठाया और उसके कान में धीमे-से कहा, "आज मैं क्या देख रही हूँ—तुम तो राकेश से बात करने में भी अपना अपमान समझती थीं!"

"तुम भूलती हो—मैं राकेश से घृणा नहीं करती—हाँ इतना अवश्य है कि मैंने उसे लिफ्ट कभी नहीं दी—और न ही आज—बल्कि वह तो—।" नम्रता कुछ कहते-कहते रुक गई।

"वह क्या—?" सुधा नम्रता का हाथ पकड़कर कालिज की ओर चलती हुई बोली।

"वह प्रोफेसर श्रीवास्तव के बारे में कुछ बता रहा था।"

"हूँ—।" सुधा चुप हो गई।

क्लास लगने की घण्टी बज उठी थी और दोनों सहेलियाँ चुपचाप क्लास में प्रविष्ट हो गईं।

नम्रता ने श्रीवास्तव को देखा जिसके जीवन के बारे में अभी [illegible] राकेश से सुनकर आ रही थी...कितनी लगन, कितनी [illegible] थी उसमें...इतना बड़ा अभाव होने पर भी उसके जीवन में [illegible] और मन में शान्ति थी। नम्रता ने क्षण-भर के लिए मन में सोचा काश उसे भी ऐसा जीवन-साथी मिले...ऐसा सहभागी मिले?

[illegible]

[illegible]

[illegible]

हो गई—वास्तव में आज बहुत-सारे स्टूडैण्ट पुस्तकें लेने के लिए लाइब्रेरी में थे इसलिए—" और फिर जब सुधा को अनुभव हुआ कि नम्रता उसकी ओर ध्यान नहीं दे रही तो वह चुप हो गई।

सीढ़ियाँ उतरने के बाद जब वह दोनों बस स्टैण्ड पर पहुँचीं तो राकेश पहले ही वहाँ क्यू में खड़ा था। उसी समय एक बस आ गई जिसमें सुधा को जाना था इसलिए वह हाथ हिलाकर 'बाए-बाए' करती हुई बस में सवार हो गई। क्यू अब इतना लम्बा नहीं रहा था क्योंकि बहुत-सी सवारियाँ इस बस में चली गई थीं। अब नम्रता राकेश के पीछे खड़ी थी। उसे पता नहीं था राकेश कहाँ रहता है।

अचानक राकेश ने पीछे मुड़कर नम्रता की ओर देखा और पूछा, "आप कौन-से नम्बर से जाएँगी ?"

"नौ" इस बार भी नम्रता ने रुखाई से उत्तर दिया।

"आज शायद कोई बड़ी अशिष्टता हो गई मुझसे···" राकेश ने बड़े दुःख भरे स्वर में कहा।

"राकेश ! आप चुप रहने का क्या लेंगे ?" नम्रता ने धीरे-से कहा।

राकेश मुस्करा पड़ा और बोला, "एक कप चाय।"

"बस—!"

"आपके साथ···।"

"हूँ—चलो।" नम्रता क्यू में से बाहर निकल आई। राकेश भी ···भी को ठीक करता हुआ नम्रता के पीछे लपका।

जब दोनों एक रैस्टोरैन्ट में प्रविष्ट हुए तभी श्रीवास्तव भी वहाँ ··· निकला।

—आइए···।" नम्रता ने निमन्त्रण दिया।

··· लोग पियो—मैंने अभी चाय पी है।" श्रीवास्तव ···।

आपको हमारा साथ देना होगा—" नम्रता ने जब से ···कहानी सुनी थी उसे प्रोफ़ेसर से अधिक लगाव और

प्रश्न किया।

तुम राकेश को इस प्रश्न की आशा नहीं थी···वह जल्दी से बोल उठा, "क्या मुझे उस लड़की से प्रेम करना होगा जो मुझे चाहती हो।"

राकेश स्वयं ही जाल में फँस गया था इसलिए नम्रता को उत्तर देने में कोई मुश्किल सामने नहीं आई। उसने हल्का-सा मुस्कराकर बैग कन्धे पर लटकाया और बोली, "मिस्टर राकेश! क्या उस लड़की को तुम से प्रेम करना होगा जिसको आप चाहते हैं?"—और बिना उत्तर सुने वह कमरे से बाहर निकल आई। कालिज लग खाली हो चुका था केवल चपरासी कमरों में बिजली और पंखों स्विच ऑफ़ कर रहे थे।

राकेश ने भी अपना बैग उठाया और नम्रता के पीछे-पीछे च पड़ा। नम्रता सीढ़ियों के पास आकर सुधा की प्रतीक्षा करने लगी सुधा कुछ पुस्तकें लेने के लिए लाइब्रेरी में गई हुई थी।

"किसकी प्रतीक्षा कर रही हैं?" राकेश जिसने घनिष्टता दीवार को फाँदा था उसके लिए वह दीवार फिर बन गई थी।

"सुधा की—!" नम्रता ने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया और सीढ़ि के पास लगे नोटिस-बोर्ड पर से नोटिस पढ़ने लगी।

"अच्छा तो मैं चलूं—?" राकेश ने पूछा और फिर जब उसे क उत्तर नहीं मिला तो चुपचाप सीढ़ियाँ उतर कर नीचे चला गया

नम्रता ने मुड़कर देखा तो राकेश जा चुका था—उसने खिड़ में से झाँका—राकेश कालिज के कम्पाउण्ड से बाहर जा रहा था अचानक उसने पलटकर ऊपर देखा···नम्रता से दृष्टि मिली अ राकेश के होंठों पर मुस्कराहट फैल गई। नम्रता झट खिड़की से ह हो गई—लेकिन उससे मूर्खता हो चुकी थी—वह मन में सोचने ल राकेश किसलिए मुस्कराया था? केवल इसलिए कि मैं उसे देख थी···किन्तु क्यों···? नम्रता काफ़ी देर मन में इस 'क्यों' का उ ढूंढती रही लेकिन उसे उत्तर नहीं मिला···हाँ इतना ज़रूर हुआ सुधा ने पीछे-से आकर धीरे-से कहा, "क्षमा करना···मुझे बहुत

भी अनजान बनकर पूछने लगी, "क्या ढूंढ रहे हैं ?"

"तुम्हारे लिए एक दूल्हा—जो मेरी थर्टिम्ट बहन से शादी करने के लिए घोड़ी पर बैठकर हमारे घर आये और—।"

"और—वह ?" नम्रता ने ब्रिज की बात काटकर प्रवेश द्वार की ओर संकेत किया जहाँ से बाली फूलों की डाली बनी मुस्कराती अन्दर आ रही थी।

"क्या ?" ब्रिज चौंककर बोला और फिर बाली को देखकर हँस पड़ा, "बहुत नटखट हो।"

दोनों को मुस्कराता देखकर बाली पास आकर बोली, "क्या षड्यन्त्र हो रहा है भाई-बहन के बीच ?"

"भैया कह रहे थे कि मैं तो बाली से शादी नहीं करना चाहता —वह मेरे पीछे पड़ी हुई है।"

बाली और ब्रिज ने एक-दूसरे की ओर आश्चर्य से देखा और फिर स्वयं ही नम्रता की इस शरारत पर मुस्करा पड़े।

"बदला ले रही हो—।" ब्रिज ने संकेत से एक बैरे को बुलाते हुए कहा।

"बदला ! कैसा बदला ?" नम्रता ने आश्चर्य की ऐक्टिंग करते हुए कहा।

"बाली! यह भी मेरे साथ शिमला जा रही है।" ब्रिज ने बाली को सूचना दी।

"भाभी को मेरे प्रोग्राम का पता है—क्यों भाभी ?" नम्रता झट बोल उठी।

"फिर भाभी—!" बाली ने बनावटी क्रोध से कहा।

"सॉरी—।" नम्रता ने जल्दी से अपने कान पकड़ लिए—ब्रिज और बाली मुस्कराकर रह गए।

लगी रहेगी ।"

"आप तो बातें करने के लिए हैं ।" नम्रता ने ब्रिज पर 'आक्रमण' करते हुए कहा ।

"देख लिया—यह किसी को नहीं छोड़ती ।" ब्रिज ने विरोध करना चाहा ।

बैरा पास आकर खड़ा हो गया था—ब्रिज ने आर्डर दिया और बैरा चला गया तो भाभी बोली, "अब इसके लिए तो एक दूल्हा खोजना पड़ेगा ।"

नम्रता भाभी की बात को काटते हुए बोली, "भाभी ! एक बात तो बताइए ।"

"पूछिए—।" भाभी ने एक लम्बी साँस लेते हुए कहा ।

"आपको भैया ने खोजा था या आपने उन्हें खोजा था ?"

"फिर शरारत—।" भाभी मुस्कराकर बोली ।

"क्या मेरी हर बात शरारत से भरी होती है ?" नम्रता ने कहा ।

"बिल्कुल—।" ब्रिज मुस्कराया ।

"अब मैं बिल्कुल मौन हो जाती हूँ ।" नम्रता ने अपने मुँह पर उँगली रख ली ।

बैरा सामान लेकर आ गया था । भाभी ने चाय बनाते हुए कहा, "इन्होंने परसों चलने का प्रोग्राम बनाया है—इसके लिए इन्होंने आज सीटें बुक करवा ली हैं । मुझे आज कुछ शापिंग करनी है—आप लोगों को मेरी सहायता करनी होगी ।"

"भैया ने आपके लिए बहुत सारा सामान तो खरीद लिया है ।" आखिर नम्रता चुप न रह सकी ।

"फिर बोली !" ब्रिज ने बनावटी क्रोध से कहा ।

"झूठ तो नहीं बोली ।" नम्रता अकड़ गई ।

"क्या-क्या खरीदा है ?" भाभी ने पूछा ।

"मैक्स फैक्टर की लिपस्टिक···ईवनिंग इन पेरिस का सेट···

और···।"

अभी नम्रता जाने क्या-क्या कहती कि बाली कुछ शर्मा कर बोली, "फिर शरारत···।"

"सच्ची बात भी शरारत होती है—।"

"क्या यह सच है ?"

"आप भैया से पूछ लीजिए।"

बाली ब्रिज की ओर मुड़ी। ब्रिज केवल मुस्कराकर रह गया था क्योंकि नम्रता ने जो कुछ कहा था सब सच था—बाली ने प्रसन्नता को मन में दबाते हुए कहा, "लेकिन मुझे तो कुछ साड़ियाँ खरीदनी हैं।"

"अब खरीद लेते हैं—भाभी एक साड़ी मुझे भी ले दो।" नम्रता ने कहा।

"केवल एक···।"

"मैं आप लोगों की तरह फ़ज़ूल खर्च नहीं।"

"भई ! किससे बातें करती हो—यह नम्रता है केवल नाम की वरना शैतान की खाला है।"

"और फिर इस शैतान से आपका क्या रिश्ता हुआ ?" नम्रता ने आक्रमण का वैसा ही उत्तर दिया।

"भई ! हम लोगों ने हथियार डाल दिए—सफ़ेद झंडी···।" ब्रिज और बाली ने बड़ी नम्रता से कहा।

फिर तीनों खिलखिलाकर हँस पड़े। ब्रिज ने बैरे को बिल लाने के लिए कहा और बिल चुकाने के बाद सभी मुस्कराते हुए लाउंज से बाहर निकल आए।

कुछ शापिंग करने के बाद जब वह लोग वापसी के लिए मुड़े तो रास्ते में ब्रिज ने कहा, "कल पिक्चर देखने का विचार है।"

"कौनसी ?" बाली ने पूछा।

"लस्ट फ़ार लाईफ़···" ब्रिज जो कार में लगी किल्ली से खेल रहा था, बोल उठा।

नम्रता भी चौंक पड़ी और फिर संभलकर बोली "भैया ! ह
आर्टिस्ट के साथ दुनिया ऐसा ही व्यवहार करती है।" इस नाम
एकाएक उसे चौंका दिया था।

कुछ ही महीने हुए 'लस्ट फ़ार लाईफ़' की एक कापी उसे दे
हुए ब्रिज ने कहा था, "नम्रता ! यह पुस्तक पढ़ो—यह था असल
आर्टिस्ट।" नम्रता ने वह पुस्तक देखी और फिर अपने भैया क
देखा था जिसको साहित्य एक आंख न भाता था—रूखे-सूखे शुष
विषयों पर तो वह बड़ा वाद-विवाद कर लेता किन्तु जब कि
साहित्यक पुस्तक पर टिप्पणी करने के लिए उसे कहा जाता तो उस
उत्तर होता, "मेरे जीवन में ऐसी पुस्तकों का कोई स्थान नहीं।"

डाक्टरी पढ़ते-पढ़ते वह साहित्य से दूर हो गया था और मैडीक
की ठोस शुष्क पुस्तकों ने उसके अन्तःस्थल पर गहरा प्रभाव डा
था। इसलिए जब उसने भैया के मुंह से यह सुना कि यह असा
आर्टिस्ट था तो वह चौंक उठी थी—नम्रता ने इर्विंग स्टोन की 'ल
फ़ार लाईफ़' ब्रिज के हाथ से लेते हुए पूछा था।"

"भैया ! आपको ऐसी पुस्तकों से रुचि है ?"

तब ब्रिज ने मुस्कराकर नम्रता की ओर देखा था और धीरे
कहा था, "मैं इस पुस्तक के लिए मुझे वाली ने कहा था वरना
तो जानती हो—वैसे यह पुस्तक पढ़ने के बाद मुझे अनुभव हुआ है
इस जीवन में किसी भी इन्सान को समझने में दुनिया तो एक
अपने भी समझने का प्रयत्न नहीं करते।"

"हां···भैया···यह सच है।" ब्रिज ने नम्रता के मन की
कही थी।

और नम्रता ने वह पुस्तक पढ़ी—फिर दोबारा पढ़ी—वह स
रात सो न सकी। बार-बार उसके मन में यह बात उभरती, क्या
कलाकार के साथ दुनिया ऐसा ही व्यवहार करती है—क्या यह दुनि
किसी को समझने का प्रयत्न नहीं करती ? दुनिया की बात अ

थी···विनसिट-वान-गोफ को उसके घर वाले भी नहीं समझते थे—केवल भाई ने सहारा दिया था।

इस पुस्तक ने नम्रता को इतना प्रभावित किया था कि इस दिन के बाद वह बहुत गम्भीरता से अपने बारे में भी सोचने लगी थी—प्राय: उसके मनोमस्तिष्क पर एक बोझ-सा छा जाता जिस कारण वह मौन हो जाती—उसके मौन को कुछ लोगों ने गलत समझा था कि नम्रता में घमण्ड है···वह अपने आपको 'बड़ा' समझने लगी है—वरना नम्रता तो वास्तव में केवल विनसिट-वान-गोफ के बारे में ही सोचती थी—और जब कभी उसके अन्त:करण पर से विनसिट-वान-गोफ का चरित्र कुछ समय के लिए हटता तो वह जीवन की रंगरलियों में सम्मिलित हो जाती और इतना खुलकर हँसती, इतनी बातें करती कि दूसरों को हथियार डालने पड़ते।

इस समय 'लस्ट फार लाईफ' का नाम सुनकर वह चहक उठी थी। वैसे उसे पिक्चरों से कोई रुचि नहीं थी लेकिन वान गाफ़ की जीवनी पर आधारित फिल्म को वह कैसे छोड़ सकती थी। इस पुस्तक ने उसके अन्त:करण पर बहुत गहरा प्रभाव डाला था—इस व्यक्ति के व्यक्तित्व ने उसका दृष्टिकोण ही नहीं बल्कि उसकी पूरी जीवन-धारा ही बदल दी थी।

"भैया! यह फिल्म मैं भी देखूंगी—" नम्रता पिछली सीट पर से अचानक बोली तो ब्रिज के साथ वाली भी चौंक उठी कि इतनी देर चुप रहने के बाद अचानक क्यों बोल उठी।

"यह पिक्चर तो तुम्हें जरूर देखनी चाहिए।" ब्रिज ने उत्तर दिया।

"जरूर क्यों?" बाली ने पूछा।

" 'लस्ट फार लाईफ' पुस्तक ने नम्रता के जीवन पर एक गहरा प्रभाव छोड़ा है।"

"क्या नम्रता ने भी वह नावल पढ़ा था?"

"हाँ—मैंने पढ़ने के बाद नम्रता को दे दिया था लेकिन मुझे

मालूम न था कि नम्रता के भावुक मन पर इसकी इतनी गहरी छाप रह जाएगी।"

"भैया ! क्या हर आर्टिस्ट के साथ ऐसा ही होता है ?"

"नहीं नम्रता—तब की और अब की दुनिया में बहुत अन्तर है।" ब्रिज ने पीछे मुड़कर देखा और उत्तर दिया।

"लेकिन—!" नम्रता क्षण-भर के लिए रुकी।

"लेकिन क्या···?" ब्रिज ने पूछा।

"आर्ट तो वही है—"

"लेकिन आर्ट को समझने वाले तो पहले से अधिक हैं—" ब्रिज बोला।

"मैं यह नहीं मानती—आज इस विज्ञान के तकनीकी युग में लोगों के पास कला जैसी चीज़ को समझने या पढ़ने का अवकाश नहीं—जीवन बहुत व्यस्त है।"

"लेकिन कलाकारों की दशा बहुत सुधर गई है—इससे तुम इन्कार नहीं कर सकतीं।"

बाली चुपचाप कार चलाए जा रही थी और ब्रिज नम्रता के साथ ···करता जा रहा था।

"दशा से अगर आपका अभिप्राय आर्थिक दशा है तो आप ग़लती पर हैं—हाँ, आज इतना अवश्य है कि आज के युग में एक कलाकार अपनी कृति को अपना धन्धा नहीं समझता और जो समझता है उसकी दशा आज भी विनसिंट वान-गोफ़ के समान है···"

नम्रता अभी वाक्य पूरा ही कर पाई थी कि बाली ने कार उनकी कोठी के सामने रोक दी और बोली, "आपका 'दौलतखाना'।"

"ओ—भाभी, मुझे क्षमा कर देना, मैं भैया से विवाद में उलझ गई और आपको इस लम्बी यात्रा में यूँही 'बोर' कर डाला।"

"नहीं नम्रता—मैं स्वयं मौन रहकर तुम्हारी बातों को सुन रही थी—और मुझे तुम्हारे उच्च विचारों का भी ज्ञान हुआ है।

ब्रिज कार से अपना सामान निकालने लगा—नम्रता ने बाली

हा, "क्या आप अन्दर नहीं चलेंगी ?"
इस समय नहीं फिर कभी—।"
"सब समझती हूँ।"
"क्या ?"
"आप शादी से पहले इस कोठी में आना रीति-रिवाज के विरुद्ध
ती हैं ना !" जाने नम्रता के मुँह से यह वाक्य अनायास कैसे
ल गया क्योंकि इस समय वह बहुत गम्भीर हो चुकी थी।
यह बात सुनकर ब्रिज ने उसे हल्की-सी चपत लगाई और बोला,
मान उठाओ अगर शिमले चलना है तो—।"
"हूँ—नहीं भैया।" नम्रता 'टा टा' करती हुई कोठी में घुस
। वास्तव में वह दोनों को एकान्त में बातें करने का अवसर प्रदान
ना चाहती थी।
बाली ने नम्रता को अन्दर जाते देखकर कहा, "आज नम्रता ने
को मात दे दी।"
"वह वास्तविकता के आधार पर विवाद कर रही थी—और
फिर कल मैटिनी भी ठीक रहेगा ?" ब्रिज कार की खिड़की के
स झुककर बड़े रूमानी ढंग से बोला।
"जरा पीछे हटकर बात कीजिए—।" बाली ने कृत्रिम क्रोध से
थ कहा।
"पर क्यों—?"
"वह—मैं कल सिनेमा हाल पहुँच जाऊँगी।" बाली ने तेजी
ौर घबराहट से कहा और कार स्टार्ट कर दी।
"वाह वाह···" ब्रिज कहता रह गया। कार चन्द गज आगे
ढ़ने के बाद मोड़ के पीछे ओझल हो गई।

☐

'मस्ट फार लाईफ़' फ़िल्म ने नम्रता के भावुक मन पर गहरा
प्रभाव डाला। वह जब सिनेमा हाल से निकली तो उसकी आँखें
ीगी हुई थीं। वह जल्दी-जल्दी घर पहुँचकर एकान्त ... रोना

चाहती थी—वह विनसिट वान गोफ़ के बारे में सोचना चाहती थी···
इसलिए जब ब्रिज और वाली ने उसे 'लार्ड' में चलने के लिए कहा
तो नम्रता ने उससे क्षमा माँग ली और बिना कुछ सुने वहाँ से घर
के लिए रवाना हो गई। वाली ने उसे रुकने के लिए बहुत आग्रह
किया किन्तु नम्रता का 'मूड' खराब हो चुका था। वह इतनी नर्वस
हुई सी थी कि उसके होंठों से आवाज़ भी नहीं निकल सकती थी—
इसलिए वह घर लौट आई।

जब वह घर पहुँची तो उसकी मम्मी और पिताजी किसी बहस
में उलझे हुए थे। नम्रता चुपचाप अपने कमरे में जाने लगी तो उसके
पिताजी ने पूछा, "ब्रिज कहाँ है?"

"वह घूमने के लिए गए हैं।"

"और तुम अकेली क्यों आई हो? कहीं ब्रिज से झगड़ा तो नहीं
हो गया?" इस बार उसकी मम्मी ने पूछा।

"क्या बात करती हो—ब्रिज और नम्रता बच्चे हैं?" पिता ने
नम्रता की मम्मी की बात काटी।

हा एक बजा रही थी।

नम्रता ने सोचा आखिर वह इतनी भावुक क्यों है ? क्यों··· ? इस क्यों का उत्तर नहीं मिला—और फिर उसने सोचा काश वह तब जन्म लेती जब दुनिया में किसी महान कलाकार ने जन्म लिया था—विचारों में भटकी हुई नम्रता की तान 'थियू' पर आकर रुकी—उसने बड़ी श्रद्धा से 'थियू' का नाम लिया। अगर थियू विनसिंट वान गोफ की सहायता न करता तो शायद वान गोफ बहुत पहले मर चुका होता और संसार को अपने महान चित्र न दे जाता।

नम्रता सारी रात सो न सकी—इसी कारण सुबह उसका सिर भारी था। नाश्ते की मेज पर घर के सभी व्यक्ति उपस्थित थे। नम्रता के उतरे हुए चेहरे को देखकर उसकी मम्मी ने कहा, "नम्रता! यह कल रात से तुम्हें क्या हो गया है ?" रात को तुमने खाना भी नहीं खाया।···"

"कुछ नहीं मम्मी।" नम्रता ने मन की बात टाल देनी चाही।

ब्रिज जो बात की गहराई में जा चुका था बड़े प्यार से बोला, "नम्रता! इन्सान को इतना भी भावुक नहीं होना चाहिए।"

"भैया! मेरे वश में कुछ भी नहीं।" नम्रता रो-सी पड़ी।

"आखिर क्या बात है ?" इस बार लक्ष्मण दास जी बोल उठे।

"बात तो कोई विशेष नहीं—रात को जो हमने फिल्म देखी थी उसने नम्रता पर बहुत प्रभाव किया है।"

"कौनसी फिल्म ?" लक्ष्मण दास की आवाज में आश्चर्य था।

" 'लस्ट फ़ार लाईफ'—एक आर्टिस्ट की कहानी थी।"

"ऊँहू—नम्रता फिल्मों की कहानियाँ काल्पनिक होती हैं।" लक्ष्मण दास ने अपनी बेटी को सांत्वना देनी चाही।

"नहीं पिताजी—यह सच्ची कहानी है।"

"पगली—" माँ ने प्यार से नम्रता को अपनी छाती से लगा लिया।

थोड़ी देर के बाद जब लक्ष्मण दास जी मेज पर से उठने लगे

तो बोले, "वाली के डैडी ने सीटें बुक करवा ली हैं—तुम लोग निश्चित समय पर स्टेशन पर पहुंच जाना।"

"जी—।"

"और रुपये मैंने तुम्हारी माँ को दे दिए हैं उससे ले लेना—अच्छा, अब तुम लोग जाकर अपनी जाने की तैयारी करो।"

"मगर डैडी—आप शिमला नहीं चलेंगे ?"

"हम लोग भी आ जाएँगे लेकिन दस दिन बाद—क्योंकि मुझे यहाँ कुछ जरूरी काम है।" यह कहकर लक्ष्मण दास अपने कमरे की ओर बढ़ गए।

"नम्मो—चलो···।" ब्रिज ने नम्रता को उठने के लिए कहा।

नम्रता उठ गई और फिर दोनों बहन भाई मिलकर जाने की तैयारी करने लगे। ब्रिज अब अधिक-से-अधिक नम्रता के पास रहना चाहता था क्योंकि उसने सोचा कि नम्रता को अगर एकान्त मिल गया तो वह फिर उलझन में फँस जाएगी।

दूसरे दिन ब्रिज और नम्रता समय पर स्टेशन पहुंच गए। वाली और उसके माता-पिता पहले ही पहुंच चुके थे और अपनी सीटों पर बिस्तर ठीक करवा रहे थे—

छै सीटों का कम्पार्टमेंट था। पाँच सीटें इन लोगों ने आरक्षित करवा रखी थीं···एक सीट किसी और की थी। वह सीट चंडीगढ़ तक बुक थी—यह पाँचों तो पहुंच गए थे और इनका छट्टा सहयात्री अभी तक नहीं आया था। जाने क्यों सभी अपने दिल में इस आने वाले अजनबी के बारे में सोच रहे थे। गाड़ी चलने में केवल पाँच मिनट रह गए थे और उस छट्टे यात्री का अभी तक कुछ पता नहीं था।

यह पाँच मिनट भी बीत गए और कालका मेल के इंजन ने भयानक और डरावनी आवाज में सीटी बजाई। इधर गार्ड ने भी हरी बत्ती करके गाड़ी चलने की आज्ञा दे दी···इतने में एक साहब लोगों से टकराते बचते-बचाते भाग कर आते दिखाई दिए। उनके

तो बोले, "वाली के डैडी ने सीटें बुक करवा ली हैं—तुम लोग निश्चि
समय पर स्टेशन पर पहुंच जाना।"

"जी—।"

"और रुपये मैंने तुम्हारी माँ को दे दिए हैं उससे ले लेना—अच्छा, अब तुम लोग जाकर अपनी जाने की तैयारी करो।"

"मगर डैडी—आप शिमला नहीं चलेंगे ?"

"हम लोग भी आ जाएंगे लेकिन दस दिन बाद—क्योंकि यहाँ कुछ जरूरी काम है।" यह कहकर लक्षमण दास अपने कमरे ओर बढ़ गए।

"नम्मो—चलो...।" ब्रिज ने नम्रता को उठने के लिए कहा।

नम्रता उठ गई और फिर दोनों बहन भाई मिलकर जाने तैयारी करने लगे। ब्रिज अब अधिक-से-अधिक नम्रता के पास चाहता था क्योंकि उसने सोचा कि नम्रता को अगर एकान्त गया तो वह फिर उलझन में फँस जाएगी।

दूसरे दिन ब्रिज और नम्रता समय पर स्टेशन पहुँच गए। और उसके माता-पिता पहले ही पहुँच चुके थे और अपनी सीटों बिस्तर ठीक करवा रहे थे—

छै सीटों का कम्पार्टमैंट था। पाँच सीटें इन लोगों ने आर करवा रखी थीं...एक सीट किसी और की थी। वह सीट तक बुक थी—यह पाँचों तो पहुँच गए थे और इनका छट्टा स अभी तक नहीं आया था। जाने क्यों सभी अपने दिल में इस वाले अजनबी के बारे में सोच रहे थे। गाड़ी चलने में केवल मिनट रह गए थे और उस छट्टे यात्री का अभी तक कुछ पता था।

यह पाँच मिनट भी बीत गए और कालका मेल के इंज भयानक और डरावनी आवाज में सीटी बजाई। इधर गार्ड ने हरी बत्ती करके गाड़ी चलने की आज्ञा दे दी...इतने में एक लोगों से टकराते बचते-बचाते भाग कर आते दिखाई दिए।

बालों के डैडी ने जो अभी तक तमाशा देख रहे थे पूछ लिया।

जमाल ने पहले तो कमरे में बैठे सभी लोगों को निहारा। फिर सिर नीचा करके धीरे से कहा, "सुना है चण्डीगढ़ में बहुत खूबसूरत इमारतें हैं।"

"इमारतें—!" सभी चौंके!

"जी हाँ—दरअसल यही कशिश मुझे चण्डीगढ़ ले आ रही है।"

"क्या आप आरकिटैक्ट हैं?"

"वैसे ही खूबसूरत इमारतें देखने की चाह दिल में रहती है।"

"आप कहाँ के रहनेवाले हैं?"

"अलीगढ़ का—दिल्ली में सैर करने के लिए आया था कि वहीं चण्डीगढ़ के बारे में मालूम हुआ।"

"आप ने दिल्ली का कुतुब मीनार देखा?" इस बार बाली ने पूछा। मञ्जला चुपचाप गम्भीर-सी यह दृश्य देख रही थी।

"अजी, कुतुबमीनार वह जाए जिसने खुदकुशी करनी हो।"

"खुदकुशी—वह क्यों?"

"हमने सुना है अकसर खुदकुशी करने वाले ही वहाँ जाते हैं।"

बाली ने इस उत्तर पर बड़ी मुश्किल से हँसी रोकी—इन लोगों के हाथ एक 'जानवर' लग गया था और यह खुश थे कि समय हँसी-मज़ाक में कट जाएगा।

"ठीक सुना है जनाब ने…।" ब्रिज ने उसकी बात का समर्थन किया।

"आप अलीगढ़ में करते क्या हैं?"

"अजी साहब! यह भी कोई पूछने की बात है—पुराने नवाब हैं—काम तो कभी हमारे बाप-दादा ने भी नहीं किया—हाँ कभी-कभी बटेरें लड़ाने का शौक पैदा हो जाता है—कनकव्वे भी उड़ा लेते हैं।" जमाल ने बड़े भोलेपन से उत्तर दिया।

अब के अनायास बाली की हँसी निकल गई। जमाल ने चौंककर बाली की ओर देखा। बाली झट हँसी रोक कर बोली, "आप किस

"हूँ—आप मेरा नाम कैसे जानते हैं—?" वह साहब ब्रिज की
ओर आकृष्ट हो गए।

ब्रिज ने एक नज़र उसे देखा और मुस्कराकर कहा, "मैं ज्योतिष
विद्या जानता हूँ।"

"सच—!"

"अजी साहब मैं यह भी जानता हूँ कि आप कहाँ जा रहे हैं?"

जमाल साहब ने आश्चर्य से ब्रिज को देखा जैसे विश्वास न आ
रहा हो। इधर सब लोग हँसी को रोके बैठे थे। कुली ने आगे बढ़कर
कहा, "साहब! मेरी मजदूरी—स्टेशन आ गया है।"

गाड़ी अब सब्जी मण्डी के स्टेशन पर रुक रही थी। जमाल
साहब ने जेब से दो रुपये निकालकर कुली को दिए और कुली सलाम
करके प्लेटफार्म पर कूद गया।

"आप तो बहुत घबराए हुए हैं—बैठिए।" ब्रिज जमाल साहब
को साथ लेकर एक बर्थ पर बैठ गया। क्षण भर रुककर ब्रिज ने
कहा, "आप चण्डीगढ़ जा रहे हैं?"

"जी—" जमाल साहब यूँ उछले जैसे किसी स्प्रिंगदार गद्दे पर
बैठे हों और अचानक किसी बिच्छू ने काट खाया हो।

"आप सचमुच ज्योतिषी हैं।" जमाल ने अपना हाथ ब्रिज की
ओर बढ़ा दिया। हाथ मिलाने के बाद जमाल ने पूछा, "आप लोग
चण्डीगढ़ जा रहे हैं?"

"जी नहीं—हम लोग शिमला जा रहे हैं।"

"ओह—ज्योतिषी न होने की वजह से अक्सर परेशानी उठा
पड़ती है।" जमाल ने बड़ी नम्रता से कहा।

"जी—!" ब्रिज ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए उसके चेहरे
ओर देखा जहाँ केवल मूर्खता ही झाँक रही थी।

"ज्योतिष विद्या न जानने की वजह से मैं सही अन्दाज़ा
कर सका कि आप चण्डीगढ़ नहीं शिमला जा रहे हैं।"

"आप चण्डीगढ़ किस सिलसिले में तशरीफ़ ले जा रहे

ाली के डैडी ने जो ग्रभी तक तमाशा देख रहे थे पूछ लिया।

जमाल ने पहले तो कमरे में बैठे सभी लोगों को निहारा। फिर र नीचा करके धीरे से कहा, "सुना है चण्डीगढ में बहुत खूबसूरत मारतें हैं।"

"इमारतें—।" सभी चौंके!

"जी हाँ—दरअसल यही कशिश मुझे चण्डीगढ ले जा रही है।"

"क्या ग्राप ग्रारकिटेक्ट हैं?"

"वैसे ही खूबसूरत इमारतें देखने की चाह दिल में रहती है।"

"ग्राप कहाँ के रहनेवाले हैं?"

"ग्रलीगढ का—दिल्ली में सैर करने के लिए ग्राया था कि यहीं चण्डीगढ के बारे में मालूम हुआ।"

"ग्राप ने दिल्ली का कुतुब मीनार देखा?" इस बार वाली ने पूछा। नम्रता चुपचाप गम्भीर-सी यह दृश्य देख रही थी।

"ग्रजी, कुतुबमीनार वह जाए जिसने खुदकुशी करनी हो।"

"खुदकुशी—वह क्यों?"

"हमने सुना है ग्रकसर खुदकशी करने वाले ही वहाँ जाते हैं।"

वाली ने इस उत्तर पर बड़ी मुश्किल से हँसी रोकी—इन लोगों हाथ एक 'जानवर' लग गया था ग्रौर वह खुश थे कि समय हँसी-ाक में कट जाएगा।

"ठीक सुना है जनाब ने···।" ब्रिज ने उसकी बात का समर्थन या।

"ग्राप ग्रलीगढ में करते क्या हैं?"

"ग्रजी साहब! यह भी कोई पूछने की बात है—पुराने नवाब —काम तो कभी हमारे बाप-दादा ने भी नहीं किया—हाँ कभी-कभी टेरें लड़ाने का शौक पैदा हो जाता है—कनकव्वे भी उड़ा लेते हैं।" मल ने बड़े भोलेपन से उत्तर दिया।

नवाबी खानदान से हैं ?"

"यह भी कोई पूछने की बात है।" जमाल ने अकड़कर उत्तर दिया।

ब्रिज ने उसके फूले हुए गालों को देखा और धीरे से कहा, "आप आराम कीजिए—काफ़ी रात गुज़र गई है।"

"आप ठीक फ़र्मा रहे हैं—अगर आराम न किया गया तो सेहत के बिगड़ने का डर है।"

जमाल साहब ने बिना कोई और बात किए अपना बिस्तर ठीक किया और चुपचाप लेट गया—कुछ ही देर बाद वह लम्बे खुर्राटे लेने लगा—यह सब-कुछ दस ही मिनट में हो गया। सभी लोग इस विचित्र व्यक्ति को देख रहे थे और जमाल साहब यूं खुर्राटे ले रहे थे जैसे उन्हें सोए कम-से-कम दो-तीन घण्टे बीत गए हों—फिर धीरे-धीरे सभी नींद की लपेट में आ गए सिवाए नम्रता के जो खिड़की से बाहर अंधेरे में जाने क्या खोज रही थी। उसके मस्तिष्क में इस समय केवल जमाल का करैक्टर घूम रहा था···उसे उस आदमी की समझ न आ रही थी—सभी लोगों ने उसे बुद्धू समझा था और उससे अपना मन बहलाया था किन्तु नम्रता उसे ऐसा न समझ रही थी—जाने ऐसी क्या बात थी कि नम्रता की दृष्टि हर पाँच मिनट बाद जमाल की ओर उठ जाती जो बड़ी निश्चिन्तता से सोया हुआ था।

नम्रता की सोच की तान लम्बी होती गई और उसकी नज़रें घुप अँधेरे में किसी को ढूंढती रहीं—जाने कब उसकी आँख लग गई और वह सो गई।

एकाएक जब उसकी आँख खुली तो गाड़ी किसी स्टेशन पर रुकी हुई थी। एक कुली आवाज़ देता हुआ गुज़र रहा था, "चण्डीगढ़ आ गया—चण्डीगढ़ आ गया···।"—नम्रता ने चौंक कर नवाब जमाल साहब की ओर देखा लेकिन वह सीट खाली थी—सीट पर केवल एक सफ़ेद काग़ज़ का टुकड़ा पड़ा हुआ था। नम्रता ने वह टुकड़ा उठाया—लिखा था—

"मेरा नाम जमाल नहीं—मैं कौन हूँ…अगर मुलाकात हुई तो ज़रूर बताऊँगा…वैसे रात का वक्त बड़े मज़े में गुज़रा—शुक्रिया।"

और नम्रता की दृष्टि फटी-की-फटी रह गई। उसका अनुमान ठीक था—वह जो कुछ भी व्यक्त कर रहा था वह न था—जाने किस के कौन-से कोने से आवाज़ आई…आदमी रोचक था—और नम्रता की नज़रें एक बार फिर प्लेटफार्म पर भटकने लगी किन्तु वह दिखाई न दिया। थोड़ी देर के बाद गाड़ी ने फिर रेंगना आरम्भ कर दिया। चण्डीगढ़ से एक दूसरा इंजन भी लग गया था और गाड़ी अब शिमला के पहाड़ों की ओर बढ़ने लगी थी—नम्रता हवा के मीठे और ठण्डे झोंके अनुभव करके मन-ही-मन कुछ सोचकर मुस्कराने लगी—इस कागज़ के टुकड़े ने नम्रता को एक ऐसी प्रसन्नता प्रदान की थी जो वह बयान न कर सकती थी। काश जमाल ने अपना नाम भी बता दिया होता…!

प्रोग्राम अनुसार कालका से एक टैक्सी लेकर वह लोग शिमले के लिए रवाना हो गए। वाली के डैडी को कालका में कुछ निजी काम था इसलिए वह वहीं रुक गए। रास्ते में ब्रिज और वाली जमाल साहब के बारे में बातें करते रहे और नम्रता खिड़की से गगन चुम्बी पर्वतों…सर्वत्र बिखरी हुई हरियाली और टेढ़ी-मेढ़ी सुरमई रंग की सड़क को देखती रही—सूरज की हल्की-हल्की सुनहरी किरणें पहाड़ों की चोटियों पर थिरक रही थीं—

टैक्सी सुरमई रंग की सड़क पर फिसलती हुई शिमले की ओर भागती रही।

चार

ब्रिज और वाली गोल्फ खेलने के लिए मशोबरे के मैदान में गये थे और नम्रता प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को कैनवस पर उतारने

प्रयत्न कर रही थी—चारों ओर ऊँचे-ऊँचे पेड़—दूर तक वर्फ़ से ढकी हुई हिमालय की चोटियाँ···और सूर्य की काँपती हुई किरणें···यह मन-मोहिनी छटा···वस सौन्दर्य-ही-सौन्दर्य—नम्रता का दिमाग़ चकरा गया···ज़रा से कैनवस पर वह सब-कुछ कैसे समेट कर भर ले—।

नम्रता ने ब्रश को एक ओर रखकर अंगड़ाई ली और गालों पर आई चंचल लटों को एक झटके से हटाकर धीरे-धीरे गुनगुनाने लगी—फिर उसने ब्रुश हाथ में लेकर हरे रंग की ट्यूब निकाली और—सहसा एक और गुनगुनाहट की हल्की-सी तरंग घाटी में गूंजी···

"न होते तुम तो करती सनअते-तख्लीक किस पर नाज ।
हमारा क्या है हम महफ़िल में न होते तो क्या होता ।।"

चाहे यह शेर दवी जुबान में कहा गया था लेकिन नम्रता के कानों में इसकी आवाज़ पहुँच ही गई थी और वह पीछे मुड़कर देखने के लिए विवश हो गई थी। पीछे तो दूर तक केवल वृक्षों के झुण्ड-ही झुण्ड थे···किसी व्यक्ति का कोई चिह्न भी नहीं दिखाई देता था। नम्रता ने अपनी भटकती हुई निगाहों को रोका और फिर अपने काम में व्यस्त हो गई।

अभी चन्द क्षण भी न बीत पाए थे कि वही आवाज़ फिर गूंजी।

"शायद मुझे निकाल कर पछता रहे हों आप ।
महफ़िल में इस ख़्याल से फिर आ गया हूँ मैं ।।"

इस वार नम्रता ने ब्रश नीचे रख दिया और कोट की जेबों में हाथ डाले टहलती हुई उन वृक्षों के झुण्ड की ओर बढ़ गई जहाँ से यह आवाज़ आ रही थी। झुण्ड के पास ढलाव आरम्भ हो गई थी और काफ़ी नीचे तक चली गई थी—नीचे एक पहाड़ी नदी वह रही थी वहाँ कोई ईजल के सामने खड़ा लैंड स्केप वना रहा था। उसकी पीठ नम्रता की ओर थी। वह आस-पास से बिल्कुल वेख़बर नज़र आता था—काम करते-करते वह धीरे-धीरे गुनगुना रहा था—और उसकी आवाज़ नम्रता के कानों तक पहुँच रही थी—

कोई आर्टिस्ट है—नम्रता ने मन में सोचा और फिर न जाने

कैसे विचार से वह इमान उतरने लगी। उसके मन में यही चाह थी कि वह इस आर्टिस्ट से मिले। कई बार रास्ते में वह [illegible] रुकी लेकिन मन में चाह और लग्न हो तो इन्सान समुद्र-पहाड़ पार कर जाता है···नम्रता आखिर वहाँ पहुँच ही गई—उसके धीरे पाँव की आहट सुनकर उस आर्टिस्ट ने मुड़कर देखा और [illegible] उसके हाथ से छूटकर नीचे गिर गया···नम्रता स्वयं गिरते-गिरते बची।

उसके सामने वही जमाल खड़ा था जिससे उसकी भेंट [illegible] हुई थी और जो चंडीगढ़ के स्टेशन पर एक कागज का पुर्जा छोड़कर अलोप हो गया था।

विचित्र संयोग था—अनोखी घटना थी···और रोमांचमय भी।

नम्रता धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ी—उसके मन में यह प्रश्न उठ रहा था कि वास्तव में वह आर्टिस्ट है? कहीं उसकी आँखें तो धोखा नहीं खा गईं?—लेकिन उसके हाथ से [illegible] क्यों गिर गया? ···क्या??—इस क्या का नम्रता के पास कोई उत्तर नहीं था। नम्रता बिल्कुल उसके सामने खड़ी होकर [illegible] देखने लगी—कितना सुन्दर दृश्य था—[illegible] था और कितनी उत्तम पेंटिंग थी—[illegible] सौन्दर्य था। नम्रता [illegible] कुछ भूलकर उस लैंडस्केप को देखने लगी—

और जमाल—! वह सिर थामकर [illegible] बैठ गया। [illegible] की दूबें इधर-उधर बिखरी हुई थीं।

हवा का एक तेज ठण्डा झोंका [illegible] महसूस हुआ कि उसकी लटें फिर विद्रोही हो रही हैं—[illegible] नहीं बल्कि 'जमाल' को भी हुआ। [illegible] और फिर स्वयं ही चौंक उठी। [illegible] पास ही खड़ा है—[illegible] रहे।

[illegible]

"लेकिन—!" नम्रता की आवाज ही न निकल सकी।

"मैंने उस रात···" जमाल ने कुछ कहना चाहा किन्तु अधिक भावुकता के कारण उसके गले से आवाज न निकल सकी।

नम्रता उसकी कोई भी बात न सुन सकी थी। उसके मनो-मस्तिष्क में इस समय केवल 'विनसिंट वान गोफ़' छाया हुआ था। नम्रता को चुप देखकर जमाल ने फिर कहा, "अगर आप विश्वास करें तो एक बात कहूँ।"

"हूँ—"नम्रता अनायास उसकी ओर मुड़ी।

"मैंने आप लोगों के सामने रेल में जो रूप धारण किया था उसमें एक भेद छुपा हुआ था। मैं दुनिया में एक जोकर बनकर रहना चाहता हूँ जो जमाने को ठहाके देता है और आप आँसुओं की माला पहनता है," जमाल ने कहा।

"लेकिन क्यों?" नम्रता ने रुचि लेते हुए आश्चर्य से पूछा।

"मैं दुनिया को बहुत निकट से देखना चाहता हूँ—अपनी कला को जीवन देना चाहता हूँ चाहे इसके लिए मुझे तन-मन-धन बल्कि अपने ... तक की भी आहुति देनी पड़े—अगर ध्यान से देखा जाए तो मैं ...स। को धोखा भी नहीं देता बल्कि अपने आंसू छुपाकर दुनिया को हँसी देता हूँ—ठहाके देता हूँ और इन ठहाकों को मैं कैनवस के श्वेत आँचल पर बिखेर देता हूँ।" जमाल ने ईजल पर लगे कैनवस की ओर संकेत करते हुए कहा।

"इतनी लगन!—इतनी साधना!" नम्रता ने आश्चर्य से कहा।

"मैं स्वयं तो भूखे पेट रह सकता हूँ लेकिन अपनी कला को प्यासी ...हीं रहने देना चाहता। इन्सान का जीवन तो समाप्त हो जाता है ...किन कला का जीवन कभी नहीं मरता—कला सदा अमर रहती है—अब तो मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि दुनिया मुझे नहीं समझना चाहती—शायद मेरा अन्त भी वान गोफ़ के समान ही हो—" जमाल ने मन की बात कह दी।

"वान गोफ़!" नम्रता चौंक पड़ी।

"शायद आपको आर्ट से लगाव नहीं वरना आपके लिए चौंक उठने की कोई बात न थी।"

"हूँ—।" नम्रता ने दिल पर काबू पा लिया और फिर धीरे-से बोली, "क्या वान गोफ़ कोई आर्टिस्ट हुआ है?"

"आर्टिस्ट···! एक बहुत बड़ा आर्टिस्ट।"

"क्या उसने अपने आपको जिन्दा रखने के लिए···" नम्रता ने कुछ कहना चाहा।

"अपने आपको जिन्दा रखने की बात मैंने नहीं कही···" जमाल ने बीच ही में कहा, "और शायद न ही मैं अपने को जिन्दा रखना चाहता हूँ।"

"तो क्या इसके लिए आत्मा की आवाज को कुचल देना—।" इस बार नम्रता ने जान-बूझकर वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

"आर्ट को जिन्दा रखने के लिए आत्मा तो क्या मैं भगवान् को भी धोखा दे सकता हूँ।" भगवान् को भी बेच सकता हूँ—"

"इतना बड़ा संकल्प!"

"हाँ—केवल इसलिए कि आर्ट सदा जिन्दा रहता है—आज वान-गोफ़ का आर्ट जिन्दा है—उसका नाम जिन्दा है—उसने जीवन में क्या किया?—उसने जीवन में क्या खोया?—क्या पाया···यह मैं जानता हूँ लेकिन दुनिया को जो आर्ट उसने दिया वह आज भी है और सदा रहेगा।" जमाल ने एक दृढ़ता के साथ कहा।

तभी विन ने नम्रता को पुकारा—वह और बाली गोल्फ़ खेलकर वापस आ गये थे। इधर-उधर नम्रता को ढूँढने के बाद उन्होंने नम्रता को ढलान के नीचे खड़े किसी आर्टिस्ट से बातचीत करते देखकर आवाज दी थी—

"आई—!" नम्रता ने दूर से ही अपने भैया को देखकर वहाँ से उत्तर दिया।

"जमाल साहब! आपका असली नाम क्या है? यह मैं केवल इस नाते से पूछ रही हूँ कि आर्ट से मुझे भी बहुत लगाव है।"